प्राचीन कथा विशेषांक
नई पीढ़ी के निर्माण का मासिक
नंदन
हिंदुस्तान टाइम्स प्रकाशन
मई '९४
पांच
रुपए
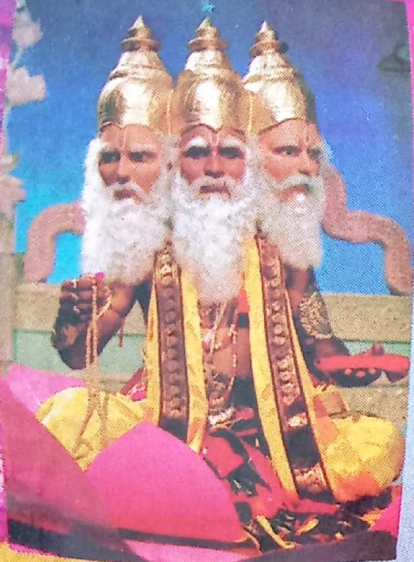
भारत में सर्वाधिक बिकने वाले कॉमिक्स
डायमण्ड कॉमिक्स
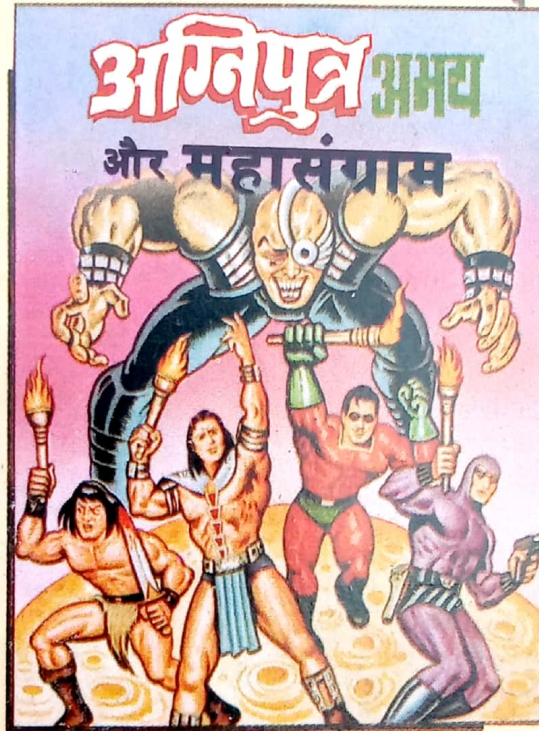
जेनार्थिया द्वारा छेड़ा गया
एक खूनी ओलम्पिक...
जिसमें कदम-कदम पर बिछे
थे बारूद के ढेर और
मौत की सुरंगें
अग्निपुत्र अभय, फौलादी सिंह,
लम्बू, महाबली शाका भी
मुसीबत में थे। मौत अपना
विशाल जबड़ा खोले प्रतिपल
उनकी ओर बढ़ रही थी।
क्या ये मौत को धोखा
देने में सफल हो सके?
दिल थाम कर प्रतीक्षा कीजिए!

डायमण्ड कॉमिक्स प्रा.लि. 2715, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

भारत में सर्वाधिक बिकने वाले कॉमिक्स
डायमण्ड कॉमिक्स
प्राण
चाचा चौधरी
जहरीला इन्सान
नोरा
प्राण
बिल्लू
गर्मी की छुट्टियां
अग्निपुत्र अभय
और महासंग्राम
प्राण
चन्नी चाची
और गर्म चाय
महाबली शाका
और डायन डंकनी
जेम्स बाण्ड-20
स्पाईडर मैन-3
डायमण्ड कामिक्स डाइजेस्ट
फैण्टम-30
डायमण्ड कामिक्स डाइजेस्ट
मैण्ड्रेक-19
रसना
जिन्नी
कॉमिक
विशेष उपहार!
इस सैट के साथ आपके मनपसंद
फिल्मी सितारों के
हस्ताक्षर युक्त 6 पोस्टकार्ड
1994
चाचा चौधरी का
रजत जयंती वर्ष
जीवन में भर लो रंग
डायमण्ड कामिक्स के संग!
अंकुर बाल बुक क्लब के सदस्य बनें
और अपने जीवन में खुशियों और
मनोरंजन की बहार लाएं
और कितना आसान है अपने इन प्रिय पात्रों से मिलना!
आप एक बार 'अंकुर बाल बुक क्लब' के सदस्य बन जाइए फिर न तो बार-बार आपको अपने मम्मी पापा से डायमण्ड कॉमिक्स लाने के लिए कहना पड़ेगा और न ही बार-बार अपने पुस्तक विक्रेता को याद दिलाना पड़ेगा, तब आपको यह चिन्ता भी नहीं रह जाएगी कि कहीं बुक-स्टॉल पर डायमण्ड कॉमिक्स समाप्त न हो जाएं। क्लब का सदस्य बन जाने पर आपको विशेष लाभ यह रहेगा कि आपको आगामी कॉमिक्स की सूचना भी यथा समय मिलती रहेगी।
मुफ्त उपहार!
'अंकुर बाल बुक क्लब' के सदस्य बनने पर आपको पहली वी.पी. में 'चिल्ड्रन जोक्स' नामक पुस्तक उपहार स्वरूप मुफ्त भेजी जाएगी तथा आपके जन्मदिन पर एक विशेष उपहार भी मुफ्त भेजा जाएगा। समय-समय पर अन्य उपहार भी आपको मिलते रहेंगे।
'अंकुर बाल बुक क्लब' के सदस्य बन जाने पर आपको हर महीने वी.पी. से घर बैठे डायमण्ड कॉमिक्स प्राप्त होते रहेंगे। कहीं आने-जाने की भी जरूरत नहीं। जो डाकिया आपका कॉमिक्स पेक्ट लेकर आएगा, आपने केवल उसे कॉमिक्स का मूल्य ही देना है। डाक खर्च भी आपको नहीं देना पड़ेगा।
कितना सुगम है 'अंकुर बाल बुक क्लब' का सदस्य बनना!
आप केवल नीचे दिये गए कूपन को भरकर और सदस्यता शुल्क के दस रुपये डाक टिकट या मनीआर्डर के रूप में भेज दें।
हर माह छः पुस्तकें एक साथ मंगवाने पर 4/- रुपये की विशेष छूट व डाक व्यय फ्री की सुविधा दी जायेगी। हर माह हम पांच छः पुस्तकें निधारित करेंगे यदि आपको वह पुस्तकें पसन्द न हों तो डायमण्ड कौमिक्स की सूची में से पांच छः पुस्तकें आप पसन्द करके मंगवा सकते हैं लेकिन कम से कम पांच से छः पुस्तकें मंगवाना जरूरी है।
आपको हर माह Choice कार्ड भेजा जाएगा। यदि आपको निर्धारित पुस्तकें पसन्द हैं तो वह कार्ड भरकर हमें न भेजें। यदि निर्धारित पुस्तकें पसन्द नहीं हैं तो अपनी पसन्द की कम से कम 7 पुस्तकों के नाम भेजें ताकि कोई पुस्तक उपलब्ध न होने की स्थिति में उनमें से 4 या 5 पुस्तकें आपको भेजी जा सकें।
इस योजना के अन्तर्गत हर माह की 20 तारीख को आपको वी.पी. भेजी जायेगी।
हाँ! मैं "अंकुर बाल बुक क्लब" का सदस्य बनना चाहता/चाहती हूं और आपके द्वारा दी गई सुविधाओं को प्राप्त करना चाहता/चाहती हूं। मैंने नियमों को अच्छी तरह पढ़ लिया है। मैं हर माह वी.पी. छुड़ाने का संकल्प करता/करती हूं।
नाम
पता
डाक
जिला
पिनकोड
सदस्यता शुल्क 10 रु. डाक टिकट मनीआर्डर से भेज रहा/रही हूं।
मेरा जन्म
नोट : सदस्यता शुल्क प्राप्त होने पर ही सदस्य बनाया जायेगा।
फन कामिक्स
डायमंड कामिक्स
थ्रिल कामिक्स
डायमंड कामिक्स
एक्शन कामिक्स
डायमंड कामिक्स
डायमण्ड कामिक्स प्रा. लि.
2715, दरियागंज नई दिल्ली-110002

एकता में ही निहित है उत्कर्ष

पावन स्वर्ण मन्दिर से पवित्र गंगा तक, हरे भरे मैदानों से बर्फीली चोटियों तक, चलते चलें आगे ही आगे...

उत्तर रेलवे एक लक्ष्य को बांधे.

वह लक्ष्य जो प्रतिदिन 1,228,675 यात्रियों से महान है। वह लक्ष्य जो 265,767 टन भार से अधिक महत्वपूर्ण है। वह लक्ष्य 11,023 कि.मि. के रास्तों की तुलना ज्यादा सुदृढ़ है, और जो 1,296 स्टेशनों से गुजरता है।

हमारा लक्ष्य है एक संगठित, खुशहाल भारत। उत्तर रेलवे का प्रत्येक कर्मी इस मंजिल को पाने के लिए तत्पर है — बिना रूके! बिना थमे!

INTERPUB/NR/03/93

आओ बात करें

वरुणा नदी के तट पर अरुणाम्पद नामक नगर था। उस नगर में वेद-शास्त्रों का ज्ञाता ब्राह्मण सुनंद रहता था। वह अत्यंत रूपवान तथा चरित्रवान था। सुनंद के घर कोई अतिथि आ जाता था,तो वह बहुत प्रसन्न होता था। रात के समय आने वाले अतिथि को वह घर में आश्रय भी देता था।

सुनंद के मन में एक इच्छा बहुत दिनों से थी। वह चाहता था—'मैं दुनिया के सभी सुंदर नगर देखूं।' एक दिन सुनंद के घर एक अतिथि आकर ठहरे। सुनंद ने उनका खूब आदर-सत्कार किया। अतिथि मंत्र-विद्या के ज्ञाता थे। उन्हें तरह-तरह की औषधियों के प्रभाव का भी अच्छा ज्ञान था। बातचीत से पता चला कि वह दुनिया के सभी भागों में घूमते हैं।

सुनंद ने उनसे तरह-तरह के प्रश्न पूछे। अतिथि ने उसके सभी प्रश्नों के उत्तर दिए। अनेक रमणीक नगरों, नदी-पर्वत और पवित्र तीर्थों के बारे में सुनंद को बताया। सुनंद आश्चर्य से बोला—''आप न तो बूढ़े हैं और न युवा ही हैं। आपकी आयु अधिक मालूम नहीं होती। आपको देखकर नहीं लगता,आप घूमते-फिरते थक गए हों। आपने कम उम्र में ही सारी पृथ्वी को कैसे देख लिया ?''

ब्राह्मण बोला—''मंत्र और औषधियों के कारण मैं तेज गति से चल लेता हूं। आधे दिन में सहस्त्र योजन चलना मेरे लिए कठिन नहीं है।''

यह सुनकर सुनंद ने अतिथि से सादर निवेदन किया—''हे महाभाग, आप मुझे भी ऐसी औषधि देने की कृपा करें। मेरे मन में बहुत दिनों से पृथ्वी को देखने की लालसा है।''

अतिथि सुनंद पर प्रसन्न था। उसने सुनंद के तलवों पर विशेष औषधि का लेपकर दिया। दिशाओं के बारे में जानकारी करा दी और मंत्र बता दिया।

अब सुनंद ने तय किया कि वह आधे दिन यानी दोपहर तक एक हजार योजन की दूरी तय कर लेगा। उसके बाद बाकी आधे दिन में घर वापस आ जाएगा। फिर वह हिमालय के हरे-भरे क्षेत्र और हिम-भूमि को देखने निकल पड़ा। सुनंद ने कल-कल करते सुंदर झरने देखे।

वहां घूमते हुए, सुनंद के तलवों का लेप उतर गया। लेप छूटने से उसके पांवों की गति साधारण हो गई। अब तो सुनंद बड़ी चिंता में पड़ा। सोचने लगा- 'मैंने अज्ञान के वश में होकर, यह क्या कर डाला ! अब यहां से लौटना कैसे होगा ! मेरा घर तो यहां से बहुत दूर है।'

दुखी सुनंद इसी सोच में डूबा हिमालय क्षेत्र में घूम रहा था। तभी वहां उसे वरूथिनी नाम की अप्सरा दिखाई दी। अप्सरा ने भी सुनंद को देखा। सुनंद सुंदर तो था ही। वरूथिनी उस पर मोहित हो गई। अप्सरा वरूथिनी सुनंद के पास आई। उससे पूछने लगी कि वह कौन है और इस पर्वत पर किसलिए घूम रहा है ? सुनंद ने अपनी व्यथा उससे कही और बोला—''हे सुंदरी, मैं किसी प्रकार अपने घर लौट सकूं, ऐसा उपाय करो। यहां रहने से मैं अपने पूजा-पाठ के नित्य कर्म नहीं कर पा रहा हूं।

वरूथिनी बोली—''हे भाग्यवान,तुम यहीं क्यों नहीं रह जाते। मैं तुम्हें यहां किसी तरह की कोई कमी न होने दूंगी।''

सुनंद बोला—''हे सुंदरी, तुम अनजान पराई स्त्री हो। मैं तुम्हारे साथ जीवन नहीं बिता सकता। इसलिए तुम किसी और को ढूंढो।'' सुनंद ने उससे पिंड छुड़ाया। फिर वह एकांत में बैठकर अग्नि देवता को स्मरण करने लगा। मंत्र बोलकर उनका आह्वान करने लगा। अग्निदेव ने उस पर कृपा की। उसके पांवों में फिर से तेज गमन की शक्ति आ गई। वह झटपट वहां से रवाना हो गया और जल्दी ही घर आ पहुंचा।

मार्कंडेय पुराण की यह कथा है। इसी तरह की अनोखी और रोचक कथाएं इस विशेषांक में हैं। सभी कथाएं प्राचीन ग्रंथों की हैं, बार-बार पढ़ने के लिए।

विशेषांक कैसा लगा, लिखना।

— तुम्हारे भइया

नंदन

मई '९४
वर्ष : ३० अंक : ७

सम्पादक
जयप्रकाश भारती

कहां क्या है

कहानियां

लेखक	शीर्षक
स्वराज्य शुचि	एक और अनेक ८
जयप्रकाश भारती	सुहाग का सिर १२
स्वरूपानंद सरस्वती	रुक जाओ यमराज १६
मुरारी बापू	उसकी परीक्षा १८
डा. सत्येंद्र वर्मा	असली-नकली १८
गोविंदनारायण तिवारी	गुफा में २०
स्नेह अग्रवाल	नए पंख २१
देवलीना केजरीवाल	बुढ़िया के तिल २४
चंद्रदत्त 'इंदु'	शिव की सेना २७
मधुर शास्त्री	पिछला जन्म ३१
प्रतिमा पांडेय	नागरूप ३४
शिवकुमार गोयल	टूटा दांत ३६
नारायण गिरि	अनमोल मणि ३७
मंजीत कौर भाटिया	घी पिओ ३८
शांति अग्रवाल	पेट पर मुंह ५३
उमेशप्रसाद सिंह	बालू में सिर ५५
रमेश कौशिक	छल का बल ५६
चंद्रकुमार शर्मा	एक से चार ५८
शान्ता ग्रोवर	तीर गायब ६१
सविता चड्ढा	मांगो वर ६३
फिगार बुलन्दशहरी	आधा वचन ६४
सुमित	रहेंगे यहां तीन देव ६६
रमेश भाई ओझा	पेड़ बने ७४
स्वामी कल्याणदेव	जल में फेंका ७५
सुरेन्द्र त्रिपाठी 'सुमन'	वे तीन नगर ७६
हरिहरस्वरूप विनोद	सही पाठ ७७
उपासना	मिल गए वेद ७९

कविताएं

लेखक	शीर्षक
रामेश्वर दयाल दुबे	कवि एक:रंग अनेक ३०
रामवचनसिंह 'आनंद'	८७

इस अंक में विशेष

रंगीन झांकी	श्रीराम-हनुमान जी २२-२३
जन जसवंत	चित्र-कथा ४१-४४
काला निशान	चित्र-कथा ४९-५२
बृजमोहन गुप्त	अजब-अनोखी दुनिया ८५

स्तम्भ

एलबम ११; आप कितने बुद्धिमान हैं ३३; ज्ञान-पहेली ५९; चटपट ६८; तेनालीराम ६९; चीटू-नीटू ८१; पत्र मिला ८३; पुरस्कृत कथा ८६; नई पुस्तकें ८७; पत्र मित्र ८८

आवरण : सागर आर्टस्, बम्बई
एलबम : इंद्रजीत; एस. एस. ब्रजवासी

सहायक सम्पादक: **देवेन्द्रकुमार**
मुख्य उप-सम्पादक : **रत्नप्रकाश शील**
वरिष्ठ उप-सम्पादक : **क्षमा शर्मा**; उप-सम्पादक : **डा. चन्द्रप्रकाश; डा. नरेन्द्रकुमार**; चित्रकार : **नारायण**

एक और अनेक

—स्वराज्य शुचि

विदिशा में बड़ी चहलपहल थी। देश-देश के राजा वहां आए थे। विदिशा के राजा विशाल की इकलौती कन्या वैशालिनी के स्वयंवर की तैयारी चल रही थी। नगर के बाहर तम्बुओं के कई छोटे-छोटे नगर बस गए थे। राजागण अपनी-अपनी सेनाओं के साथ आए थे। ऐसे अवसरों पर कई बार युद्ध भी छिड़ जाता है। इसीलिए वे पूरी तैयारी के साथ आए थे।

अयोध्या नरेश करंधम का बेटा अवीक्षित भी वहां मौजूद था। उसकी वीरता से सभी शत्रु-मित्र परिचित थे। उसके साथ बड़ी सेना नहीं थी– कुछ मित्र और थोड़े-से सैनिक। वह राजमहल के पास ही शिविर में ठहरा हुआ था। उसके पिता ने कई राजसूय और अश्वमेध यज्ञ किए थे। अवीक्षित ने पिता की दिग्विजय में बहुत बड़ी भूमिका निभाई थी।

अवीक्षित को वहां देख, दूसरे राजा चौकन्ने हो गए। उन्होंने आपस में मंत्रणा की। योजना बनी कि अगर अवीक्षित वैशालिनी को बलपूर्वक ले जाने का प्रयास करे, तो मिलकर उसे रोका जाए।

निश्चित समय पर स्वयंवर का समारोह आरंभ हुआ। राजागण अपने-अपने सिंहासनों पर बैठे थे। उनके बीच अवीक्षित भी मौजूद था। तभी वैशालिनी स्वयंवर सभा में आई। उसे एक-एक करके वहां बैठे राजा-राजकुमारों का परिचय दिया जाने लगा। वैशालिनी हरेक को रुककर नमस्कार करती, फिर बढ़ जाती।

वह अवीक्षित के सामने रुक गई। उसका परिचय सुना। कुछ पल सकुचाई-सी खड़ी रही। उसके हाथ कुछ ऊपर उठे, फिर अवीक्षित पर एक दृष्टि डाल वह आगे चली गई।

अगले ही पल जैसे अघट घट गया। वैशालिनी सभा भवन से लोप हो गई। सब देखते रह गए। अवीक्षित वैशालिनी को लेकर अपने रथ में जा बैठा। सब तरफ शोर मच गया। शेष राजाओं ने अवीक्षित को घेर लिया। उन्होंने तो पहले ही ऐसा करने की योजना बना रखी थी।

अवीक्षित के मित्रों ने कहा— "आज शत्रुओं से पार पाना कठिन है।" लेकिन अवीक्षित फिर भी नहीं घबराया। उसने भयंकर युद्ध किया पर धीरे-धीरे वह

थकने लगा। उस पर सब तरफ से वार होने लगे। उसका धनुष टूट गया, कवच कट गया। आखिर उसे बंदी बना लिया गया।

राजा विशाल राजकुमारी वैशालिनी को राजमहल में ले गए। उसे सांत्वना देते हुए बोले— "बेटी, अवीक्षित को उसके किए का दंड मिल गया। उसका गर्व खंडित हो चुका है। मैं स्वयंवर सभा का फिर आयोजन कर रहा हूं। अब तुम मनचाहे राजा का वरण कर सकती हो।"

वैशालिनी कुछ देर चुप खड़ी रही, फिर धीमे स्वर में बोली— "पिता जी, मुझे क्षमा करें। मेरा जी अच्छा नहीं है। मैं स्वयंवर में भाग नहीं ले सकूंगी।"

राजा विशाल ने बेटी पर जोर डालना उचित नहीं समझा। उन्होंने घोषणा करा दी —'स्वयंवर सभा का फिर से आयोजन होगा। नए निमंत्रण भेजे जाएंगे।' स्वयंवर में भाग लेने आए राजागण एक-एक करके लौट गए। सब इस स्थिति के लिए अवीक्षित को बुरा-भला कह रहे थे।

इसके कुछ ही दिन बाद राजा करंधम की विशाल सेना ने राजा विशाल की राजधानी को घेर लिया। अब तो राजा विशाल घबरा गए। वह करंधम का सामना करने की स्थिति में नहीं थे। फिर भी युद्ध करना अनिवार्य हो गया था।

विशाल ने सेना को मोर्चेबंदी का आदेश दिया। फिर करंधम का सामना करने के लिए बाहर निकले। करंधम की सेना ने विदिशा की सेना को मैदान से भागने पर विवश कर दिया। राजा विशाल वीरता से लड़े पर बंदी बना लिए गए।

करंधम ने कहा— "विदिशा नरेश, हमारे बेटे ने आपका क्या बिगाड़ा था, जो आपने उसके साथ ऐसा बुरा व्यवहार किया?"

विशाल चुप रहे। उनके पास कोई उत्तर नहीं था। वह कैसे कहते कि यह सब स्वयंवर में आए राजाओं की हठ के कारण हुआ। उन्होंने करंधम से क्षमा मांग ली।

अवीक्षित मुक्त हो गया। उसने आकर पिता के चरण छुए और चुपचाप एक तरफ खड़ा हो गया। वह अपनी पराजय के अपमान को भूल नहीं पाया था। करंधम ने कहा— "अब सब ठीक हो गया है।"

राजा विशाल ने करंधम से कहा— "महाराज, मुझे भूल सुधारने का अवसर दीजिए। मैं वैशालिनी का विवाह राजकुमार अवीक्षित से करना चाहता हूं।" करंधम को भला इसमें क्या आपत्ति हो सकती थी, उन्होंने अवीक्षित की ओर देखा, तो वह बोल उठा— "पिता जी, मैं यह विवाह सम्बंध स्वीकार नहीं सकता। मैं राजकुमारी के सामने परास्त हुआ हूं। मुझे बंदी गृह में रखा गया। क्या अब भी आप मुझे वीर कहेंगे? मैं अपने को इस योग्य नहीं समझता।"

वैशालिनी ने तुरंत कहा— "ऐसी बात नहीं। राजकुमार की वीरता में किसी को कोई संदेह नहीं हो सकता। यह अकेले थे और विरोधी अनेक। इन्होंने सरलता से पराजय स्वीकार नहीं की। साहस से शत्रुओं का सामना किया। जो हुआ वह नहीं होना चाहिए था। मैं तो इन्हें अपना पति स्वीकार कर चुकी हूं।"

यह एक नई समस्या उठ खड़ी हुई थी। इसका समाधान होता न दिखा, तो करंधम राजकुमार अवीक्षित को साथ लेकर अपनी राजधानी लौट गए। उन्होंने राजा विशाल को आश्वासन दिया कि वह अवीक्षित को समझा-बुझाकर रास्ते पर लाने का प्रयास करेंगे।

अवीक्षित के इस निर्णय से वैशालिनी का मन बहुत दुःखी हुआ। उसने पिता से कह दिया कि वह वन में जाकर तप करना चाहती है। राजा ने उसे बहुत समझाया, पर वैशालिनी तो हठ ठान चुकी थी।

उधर अवीक्षित की माता वीरा ने एक दिन उसे अपने पास बुलाया। कहा— "बेटा, मैं किमिच्छक व्रत करना चाहती हूं।"

"इसमें मुझे क्या करना होगा?"— अवीक्षित ने पूछा।

"बस, इतना ही कि कोई भी व्यक्ति तुम से जो कुछ मांगे उसे दे दोगे।"— मां ने समझाया। अवीक्षित ने वचन दे दिया।

अवीक्षित की मां वीरा ने व्रत की दीक्षा ली। और उसने राज्यभर में घोषणा करा दी कि मां ने हर व्यक्ति की शुभ इच्छा को पूरा करने का व्रत लिया है।

इस घोषणा के तुरंत बाद राजा करंधम राजकुमार के सामने आ खड़े हुए। उन्होंने कहा— "बेटा, मैं पौत्र का मुंह देखना चाहता हूं। क्या तुम्हारी मां, मेरी यह इच्छा पूरी कर सकती है?"

अवीक्षित माता-पिता की योजना समझ गया। यह सब उसे विवाह बंधन में बांधने के लिए किया गया था। उसे माता के व्रत की सफलता के लिए विवाह न करने का अपना प्रण तोड़ देना पड़ा। उसने राजा करंधम से कहा— "पिता जी, मैं आज फिर परास्त हो गया। मैं विवाह करने को तैयार हूं, लेकिन वैशालिनी ही मेरी पत्नी बन सकती है।"

उधर वैशालिनी वन में कठोर तप कर रही थी। उसने अन्न त्याग दिया था। धीरे-धीरे उसका शरीर क्षीण होने लगा। पर वह एकाग्र चित्त होकर तपस्या में लगी रही।

एक रात वैशालिनी की कुटिया दिव्य प्रकाश से जगमगा उठी। आकाशवाणी हुई— 'वैशालिनी, तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी। तुम्हारी साधना से देवता प्रसन्न हैं।'

देव वाणी सुन, वैशालिनी का मन प्रसन्न हो उठा। लेकिन अभी उसकी परीक्षा जैसे समाप्त नहीं हुई थी।

एक दिन वह नदी से जल लेकर अपनी कुटिया की तरफ आ रही थी, तभी एक डरावना स्वर गूंजा और किसी ने उसकी कलाई पकड़ ली। वैशालिनी चीख उठी। सामने दृढ़केश दानव खड़ा था। वह गरजा— "मैं तुझे जीवित नहीं छोड़ूंगा। तेरा तप हमारे लिए संकट को जन्म देगा। मरने को तैयार हो जा।" और दृढ़केश उसे वन में घसीटता हुआ चल दिया।

वैशालिनी रक्षा के लिए पुकारने लगी—"बचाओ, इस दुष्ट दानव से मेरी रक्षा करो।" तभी घोड़ा दौड़ाता हुआ एक युवक वहां आ गया। उसने पुकारा —"देवी, डरो मत। मुझे इस दानव का काल समझो। आज यह यमलोक जाएगा।"

दृढ़केश ने वैशालिनी का हाथ छोड़ दिया। वह युवक पर टूट पड़ा। दोनों में भयानक लड़ाई हुई। वैशालिनी एक तरफ खड़ी देखती रही। आखिर युवक ने तलवार का ऐसा प्रहार किया कि दृढ़केश की गरदन कट गई।

वैशालिनी उस युवक का परिचय पूछती इससे पहले ही 'वीर अवीक्षित की जय' के स्वर गूंज उठे। कई घुड़सवार वहां आ पहुंचे। वह युवक अवीक्षित ही था। अवीक्षित ने वैशालिनी से पूछा, तो उसने अपना परिचय दिया।

उसी समय आकाश से एक विमान उतरा। मय नामक गंधर्व अवीक्षित के पास आकर बोला— "यह वैशालिनी मेरी बेटी भामिनी है। महर्षि अगस्त्य ने इसे शाप दिया था। इसीलिए इसे धरती पर जन्म लेना पड़ा। मेरी बेटी आपको पति मान चुकी है। अब आप इसे स्वीकार करें। पिछली बातें भूल जाएं।"

मय गंधर्व दोनों को आशीर्वाद देकर विमान में बैठ चला गया। अवीक्षित वैशालिनी को लेकर राजधानी लौट आया। वीरा का व्रत पूरा हुआ, करंधम ने जो मांगा उन्हें मिला। वैशालिनी और अवीक्षित भी बहुत प्रसन्न थे।

(मार्कंडेय पुराण)

भगवान विष्णु भगवती लक्ष्मी

सुहाग का सिर

—जयप्रकाश भारती

लंका के राजा रावण का ज्येष्ठ पुत्र था मेघनाद । एक बार देवताओं को जीतने रावण स्वर्गलोक गया । वहां युद्ध में रावण का मातामह एवं मंत्री सुमालि मारा गया । लगने लगा कि रावण की पराजय होगी । तब वीर मेघनाद ने आगे बढ़कर युद्ध किया । उसने इंद्र के पुत्र जयंत को हरा दिया । देवराज इंद्र के शस्त्र छीन लिए । उन्हें बांधकर लंका ले आया ।

यह देख सारे देवता ब्रह्मदेव को साथ लेकर लंका गए । उन्होंने मेघनाद से कहा कि इंद्र को छोड़

दें । मेघनाद ने शर्त लगा दी कि मुझे अमर होने का वरदान मिले । ब्रह्मदेव बोले—"पृथ्वी पर सभी नाशवान हैं, इसलिए यह नहीं हो सकता । हां, तुम कोई दूसरा वर मांग लो ।"

मेघनाद बोला—"जब भी मैं अग्नि में हवन करूं, अग्नि से अश्व सहित दिव्य रथ निकले । मैं उस रथ पर जब तक सवार रहूं, किसी से पराजित न होऊं और कोई मार न सके ।"

ब्रह्मदेव ने मेघनाद को यह वर दे दिया । इंद्र को

छुड़ाकर ले आए और फिर से इंद्र पद पर बैठाया। तभी से मेघनाद को इंद्रजित भी कहा जाने लगा।

सीता-हरण होने के बाद, श्रीराम सुग्रीव की वानर सेना के साथ लंका आए। मेघनाद ही युद्ध करने आगे आया। अंगद से उसका युद्ध हुआ। वह अदृश्य होकर लड़ता रहा। राम-लक्ष्मण को नागपाश में बांधकर, सारी वानर सेना को मूर्च्छित करके, प्रसन्न होता हुआ रावण के पास पहुंचा। इधर गरुड़ ने नागपाश काट डाले। वानर फिर से चेतन हो गए।

आगे के युद्ध में जब रावण के अनेक योद्धा मारे गए, तो रावण बहुत दुखी हो उठा। उस समय मेघनाद ने पिता को ढाढ़स बंधाया। फिर से युद्ध करने चल पड़ा। पहले वह अस्त्र-शस्त्रों को मंत्रों से शुद्ध करने निकुंभिला गया। उसके बाद गुप्त रूप में युद्ध भूमि में आ गया।

मेघनाद मायावी युद्ध करने लगा। उसने कई तरह से छल-कपट द्वारा आतंक पैदा कर दिया। पर उसके सारे हथकंडे विफल ही होते जा रहे थे। तब मेघनाद निकुंभिला जाकर हवन करने लगा। इस काम में कोई बाधा न पड़े, इसलिए उसने बहुत-से राक्षसों को पहरे पर लगा दिया।

विभीषण ने श्रीराम को बताया कि मेघनाद यज्ञ करने गया है। यज्ञ पूरा करने पर उसे दिव्य रथ मिल जाएगा। फिर उसे कोई पराजित न कर पाएगा। श्रीराम ने लक्ष्मण, हनुमान और श्रेष्ठ वानर वीरों को निकुंभिला भेजा। उन्होंने वहां पहुंचकर राक्षसों का संहार करना शुरू कर दिया।

मेघनाद का यज्ञ पूरा होने वाला था, इसलिए शुरू में उसने ध्यान नहीं दिया, लेकिन जब वानर उस पर वार करने लगे, तब विवश होकर वह उठा। यज्ञ बीच में छोड़कर वह वानरों पर धावा बोलने लगा। उसने विभीषण को देखा, तो उसे भला-बुरा कहने लगा।

तभी लक्ष्मण ने बीच में पड़कर मेघनाद से युद्ध शुरू कर दिया। पहले मेघनाद के सारथी को मार गिराया। तब मेघनाद स्वयं सारथी का काम करने लगा और युद्ध भी करता रहा। कई वानरों ने मिलकर उसके चार घोड़ों को भी मार गिराया।

लक्ष्मण जी बहुत तीखे बाण छोड़ने लगे। वज्र सरीखे बाणों को आते देख, मेघनाद तुरंत अंतर्धान हो गया। राक्षस तो मायावी होते ही हैं। अनेक वेश धारण करके लड़ाई करने लगा। कभी वह दिखाई देने लगता और कुछ ही देर बाद छिप जाता। उसने लक्ष्मण जी पर त्रिशूल छोड़ा, जिसे काटकर लक्ष्मण जी ने सौ टुकड़े कर डाले।

मेघनाद भी युद्ध में पीछे हटने वाला न था। उसने ऐसा दांव खेला कि बहुत से हथियार छूटने लगे, मानो लक्ष्मण जी तथा उनकी सेना की ओर सर्प दौड़ते हों। बैरी को अजेय देखकर वानर डरने लगे। बस, लक्ष्मण जी क्रोध से बिफर उठे और बोले— "मैंने इस पापी को बहुत खिलाया, पर अब तो इसे मारना ही पड़ेगा, क्योंकि वानर आदि बहुत भयभीत हो रहे हैं।"

लक्ष्मण जी ने राम का स्मरण किया और धनुष पर अमोघ बाण चढ़ाया। इस तरह साधकर बाण चलाया कि उसने मेघनाद की छाती को बींध दिया। मेघनाद काले मेघों के समान गरजा, तभी लक्ष्मण जी ने ऐसे तीर चलाए कि उसका सिर धड़ से अलग हो गया। उसकी भुजाएं भी कट गईं। मेघनाद का सिर पृथ्वी पर लुढ़क गया। उसकी दाहिनी भुजा आकाश में उड़ गई।

बाण से बिंधी जो भुजा लंका के महलों की ओर उड़ कर गई थी, वह मेघनाद के आंगन में जाकर गिरी। महल में सुलोचना सोने के सिंहासन पर विराज रही थी। विद्याधरी, सखियां तथा अनेक दासियां उसकी सेवा कर रही थीं। सखी ने कटी भुजा को आश्चर्य से देखा। सोचने लगीं कि क्या आज ऐसा युद्ध हुआ कि अखंड भी खंडित हो गया।

सखी के बताने पर सुलोचना हैरान-परेशान होती हुई उठी। वह सोच रही थी कि रावण और राम में बड़ा युद्ध हो रहा है। वीर योद्धाओं में अग्रणी मेरे पति भी उसमें शामिल हैं। उनसे लड़ने का साहस किस देवता या राक्षस में है! लेकिन पति की भुजा को

पहचान कर भी उसे विश्वास नहीं हुआ। पतिव्रता सुलोचना विलाप करती हुई बोली— "हे भुजा, तू लिख कर मेरा संदेह दूर कर। क्या मेरे सुहाग को किसी ने हानि पहुंचाई है ?"

यह सुनकर भुजा ने हथेली पसार दी। सखी उठ कर दौड़ी और ढूंढ़कर खड़िया ले आई। खड़िया उस हाथ पर रख दी। बस, फिर क्या था! मणियों से जड़े फर्श पर वह भुजा लक्ष्मण जी का सुंदर यश लिखने लगी— 'घट-घट में वास करने वाले श्रीराम तथा उनके तपस्वी भाई लक्ष्मण के गुणों की थाह कौन पा सकता है। मैं बिना जीभ के हाथ से लिखकर कैसे वर्णन करूं ? मेरा सिर श्रीराम के पास गया और तुझे समाचार देने के लिए भुजा यहां भेज दी है।'

भुजा के लिखे को बांच कर और उसे ठीक जानकर सुलोचना फूट-फूट कर रोने लगी। वह पति की वीरता और धीरता को याद करके आंसू बहाती रही। सखियों ने उसे तरह-तरह से समझाया और धीरज बंधाया। काफी देर बाद सुलोचना कहने लगी—"विधाता को मुझे ऐसा ही दुःख देना था, सो मेरे स्वामी युद्ध में मारे गए। पुलस्त्य मुनि के वंश का नाश हुआ। अब सूर्य और चंद्रमा आनंद से प्रकाश करेंगे। अब पवन मनमाने ढंग से चलेगा और इंद्र चैन से अपने लोक में मौज करेगा।" सुलोचना ने बहुत-से कीमती वस्त्र, गहने, हीरे-मोती जल्दी-जल्दी दान में दे दिए।

पालकी में बैठकर सुलोचना चल दी। कुटुम्बी जन तथा बहुत से दूसरे लोग भी पालकी को घेर कर साथ-साथ हो लिए। रावण के द्वार पर पालकी जाकर रुकी। द्वारपालों ने जाकर रावण को खबर दी, तो आज्ञा हुई कि उसे तुरंत भीतर ले आओ।

सुलोचना भीतर पहुंची। उसने माथा नवाकर चरण छुए। फिर मेघनाद की भुजा को आगे करके, दुखी होती हुई बोली— "तुम्हारे जीते जी हमारा ऐसा हाल हुआ, जो सुख को छोड़ यह दारुण दुख भोगना पड़ा। यह भुजा आकाश मार्ग से होकर मेरे घर में आकर गिरी। मुझे संदेह हुआ तो इसने सारा हाल खड़िया से

लिख दिया। इसने रामचंद्र और लक्ष्मण की महिमा भी लिख कर बता दी।"

यह कहते-कहते सुलोचना के आंसू रुक न सके। तनिक ठहर, फिर वह बोली— "मेरे स्वामी का सिर वहां है, जहां दोनों भाई राम-लक्ष्मण हैं। कोई उपाय कीजिए, जिससे मुझे सिर मिल जाए।"

बहू की बातें रावण को वज्र के समान लगीं। उसने जीने की आशा छोड़ दी। परंतु किसी तरह धीरज रखकर उसे समझाने लगा— "संसार में मेरे बराबर योद्धा कौन है ? राम-लक्ष्मण, सुग्रीव, नल-नील, हनुमान और विभीषण सब को मार कर तुरंत ही मैं शीश ले आऊंगा। हे कुल वधू, चार घड़ी ठहर। फिर देख, मैं वैरियों के कैसे छक्के छुड़ाता हूं। शत्रु के शीशों का ढेर लगा दूंगा। देर नहीं लगेगी।"

सुलोचना को रावण के कहे पर विश्वास नहीं हुआ, पर उसने कुछ भी उत्तर नहीं दिया। सुलोचना उठकर मंदोदरी के पास चली गई। सास के चरण पकड़कर रोने लगी। फिर रोते-रोते ही भुजा की लिखी हुई राम-लक्ष्मण की महिमा उसने सुनाई।

यह सब सुनकर मंदोदरी बहुत दुखी हुई। बोली— "हे सुलोचना, मैंने नारद मुनि के मुख से सब बातें सुनी हैं। उनमें से पिछली सब बातें सच हुई हैं। ऋषि-मुनि के कहे वचन कभी झूठे नहीं होते।
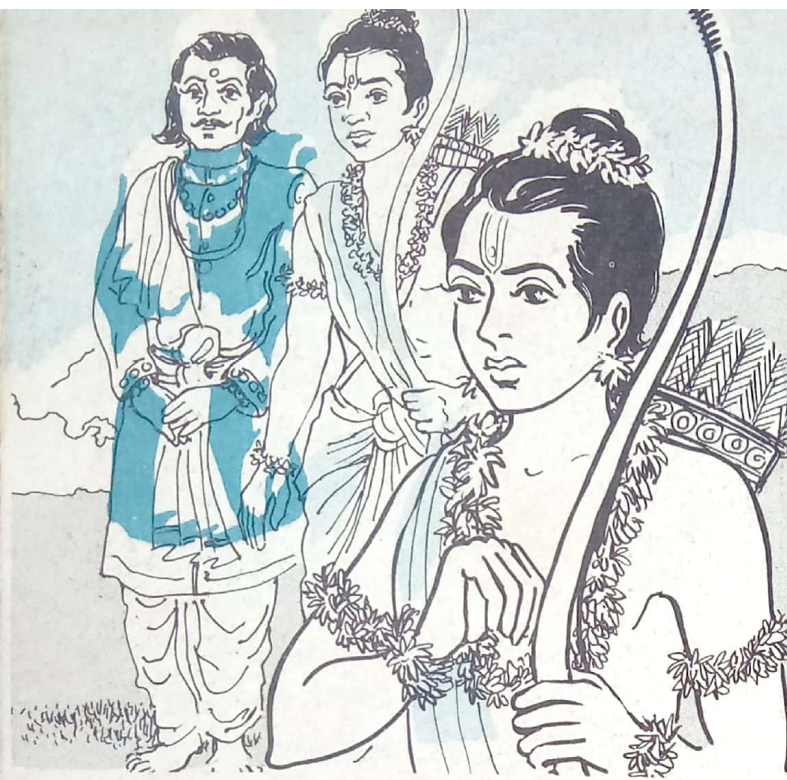
आगे की जो कथा नारद ने कही है, वह सुन—

"जब बड़े-बड़े शूरवीर मारे जाएंगे, तब रावण जूझेगा। प्राण जाने पर भी रावण नीति की बात नहीं मानेगा। भाई के भेद से लंका गढ़ टूटेगा। देवता, मनुष्य और नाग जेल से छूटेंगे। सीताजी शोक और दुख से मुक्त होंगी और रीछ-बंदर राजभवन को लूटेंगे।"

सुलोचना को समझाते हुए मंदोदरी बोली— "हे पुत्री, अब तू लाज छोड़ कर रामचंद्रजी के पास जा और पति का सिर मांग ला। वह सदा नीति का पालन करने वाले हैं। लक्ष्मण जी की कीर्ति भी तूने सुन ली है। फिर तेरा ससुर विभीषण भी तो वहां है। जो हुआ सो हुआ, अब तू देर मत कर।"

सास की बातें सुनकर, सुलोचना के मन को धीरज हुआ। उसने सास के चरणों में शीश नवाया और राम-लक्ष्मण जहां थे, वहां के लिए चल दी।

सुलोचना ने रीछ-वानरों की सेना को देखा, जो समुद्र और सुवेल पर्वत को घेरे हुए थी। सेना में घुसते हुए उसे लगा, जैसे पराए घर में जा रही हो। बंदरों ने पालकी को आते देखा, तो समझे बैरी के नगर से आ रही है। लगता है, मेघनाद को खोकर रावण को अब समझ आ गई। उसने हठ छोड़कर सीताजी को भेज दिया है। वे कहने लगे— "चलो, बिना परिश्रम के ही लंका गढ़ टूट गया। रामचंद्रजी का काम पूरा हो गया।"

सुलोचना वहां जा पहुंची, जहां रामचंद्रजी विराजमान थे। बड़े-बड़े योद्धा वानर वहां चारों तरफ पहरा दे रहे थे। श्रीराम के दोनों तरफ लक्ष्मण और विभीषण थे। सुलोचना ने हाथ जोड़ और शीश नवाकर रामचंद्रजी को प्रणाम किया और बोली— "हे दीनबंधु, पति की भुजा ने लिखकर सब बता दिया है। अब मैं आपसे पति का सिर मांगने आई हूं।"

श्रीराम करुणा से भर उठे और बोले— "तेरे पति को अभी जिला दूं। तू सौ कल्प तक लंका का राज्य कर। शोक छोड़कर मन में प्रसन्न हो और घर को लौट जा।"

यह सुनकर आसपास सभी वानरों में खलबली मच गई। अगर कहीं ऐसा हो गया तो माता सीता कैसे छूटेंगी। देवताओं को राक्षसों से कैसे मुक्ति मिलेगी?

सुलोचना ने श्रीराम के वचनों को सुना। उनकी उदारता का आदर करते हुए बोली— "हे देव, आप सब करने में समर्थ हैं। पर हे करुणामय, ऐसे जीने से मरना ही ठीक है। भुजाओं के बल से जीत कर, चौदह भुवनों के भोग कर लिए। मेरे पति ने लड़ाई में लक्ष्मण जी के हाथों प्राण गंवाए हैं और मैं आपके दर्शन पाकर धन्य हो गई हूं। अब संसार रूपी समुद्र को पार करने की सही घड़ी है।"

श्रीराम ने जाम्बवंत और सुग्रीव से कहकर मेघनाद का सिर मंगवा दिया। लेकिन सुग्रीव के मन में आशंका हुई कि भुजा ने पृथ्वी पर लिखा होगा? उसने कहा— "अगर यह सिर हंस दे, तो विश्वास हो कि यह स्त्री सच्ची है, नहीं तो राक्षसों की माया कच्ची है।"

सुलोचना उस सिर से बोली— "हे स्वामी, शीघ्र ही हंसो, नहीं तो मेरी बात झूठी हो जाएगी।"

मुख नहीं बोला। सुलोचना बार-बार कहने लगी— "शायद लड़ाई के कारण थक गए हो। हे स्वामी, भगवान के सामने मुझे क्यों लजाते हो?"

तभी सिर अचानक हंस पड़ा। यह देखकर रीछ-वानर सभी हक्के-बक्के रह गए।

(रामचरित मानस)

रुक जाओ यमराज

—स्वामी स्वरूपानंद सरस्वती
(द्वारिका के शंकराचार्य)

राक्षस राज रावण ब्रह्माजी से वर पाकर घमंड से भर उठा। कुबेर को हराकर लंका का स्वामी बन बैठा। पुष्पक विमान उससे छीन लिया। यक्षों के भाग जाने के बाद राक्षस लंका में बस गए। रावण का आतंक पूरी दुनिया में फैल गया। क्या देवता क्या मनुष्य, सब उससे आतंकित रहने लगे।

रावण अपने को ब्रह्मांड का स्वामी समझने लगा। उसे लोगों को सताने में आनंद आता था। एक दिन वह पुष्पक विमान में बैठा विचरण कर रहा था। तभी बादलों के बीच जाते नारद जी दिखाई दिए। रावण ने उन्हें प्रणाम किया।

नारद जी बोले— "रावण; ब्रह्माजी से वर पाकर तुम्हारा बल बहुत बढ़ गया है। तुम सबको जीत चुके हो। पर एक बात फिर भी मेरी समझ में नहीं आती। तुम बेचारे मनुष्यों को क्यों मारते हो? अगर तुम्हें अपनी शक्ति सचमुच दिखानी ही है, तो यमराज के पास जाओ। उनसे युद्ध करो। सबको अपने लोक में बुलाने वाले यमराज को जीतकर ही तुम विश्व विजेता कहला सकते हो।"

नारद जी की बात सुन, रावण बोला— "महर्षि, यह तो आपने ठीक कहा। मैंने प्रतिज्ञा की है कि मैं चारों लोकपालों को परास्त करूंगा। मैं अभी यमपुरी जाता हूं। सब प्राणियों को मृत्यु देने वाले सूर्यपुत्र यम को मैं मार डालूंगा।" इतना कह, रावण दक्षिण दिशा में चला गया।

नारद जी भी तुरंत यमपुरी की ओर चल दिए और रावण से पहले ही वहां पहुंच गए। उन्होंने देखा, अग्नि को साक्षी मानकर यमराज प्राणियों के पाप-पुण्य का हिसाब लगा रहे हैं। नारद जी को आया देख, यमराज ने उन्हें प्रणाम किया। बोले— "महर्षि, सब कुशल तो है? आज आपका शुभागमन कैसे हुआ?"

नारद जी बोले— "मैं आपको एक महत्त्वपूर्ण सूचना देने आया हूं। शांत चित्त होकर ध्यान से मेरी बात सुनो और तुरंत अपनी रक्षा का उपाय कर लो। क्योंकि रावण अपनी सेना के साथ आपसे युद्ध करने चला आ रहा है। आपको सचेत करने के लिए ही मैं उससे पहले यहां आया हूं। वैसे मैं इस बात को अच्छी तरह जानता हूं कि आपको कोई नहीं जीत सकता।"

यमराज और नारद बात कर ही रहे थे, तभी रावण का पुष्पक विमान आता दिखाई दिया। रावण ने स्वर्ग और नरक दोनों देखे। स्वर्ग में पुण्यात्मा अपने सत्कर्मों के बल पर सुख से थे। दूसरी ओर पापी लोग भयंकर कष्ट पा रहे थे। रावण कुछ पल यह देखता रहा, फिर उसने नरकवासियों को मुक्त कर दिया। यमदूतों ने उसे रोकना चाहा, पर रावण की शक्ति के आगे उन्हें हार माननी पड़ी।

थोड़ी देर में यमदूत इकट्ठे होकर आए और रावण से युद्ध करने लगे। तब तक राक्षस भी आ गए थे। उन्होंने रावण के पुष्पक विमान को तोड़फोड़ डाला। लेकिन अगले ही पल पुष्पक विमान फिर पहले जैसा हो गया। यह ब्रह्माजी का प्रभाव था। पुष्पक विमान
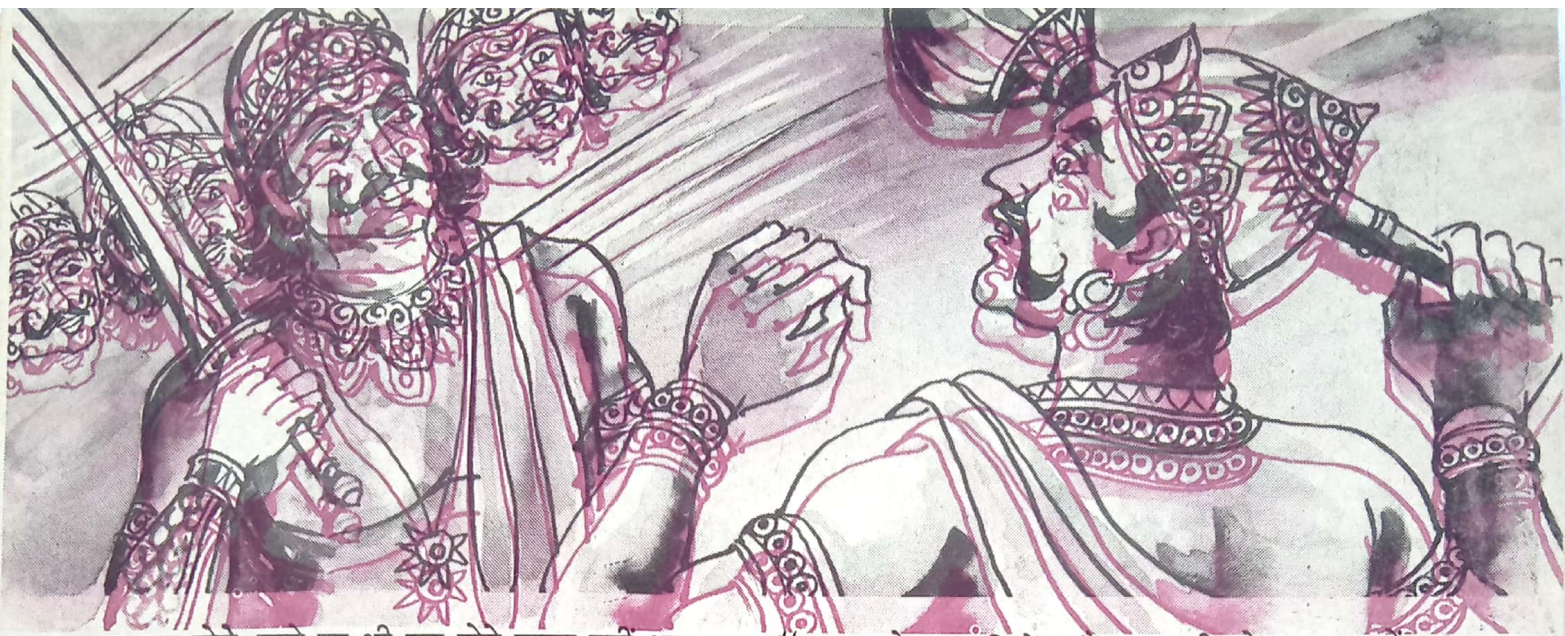
बार-बार तोड़े जाने पर भी नष्ट होने वाला नहीं था।

यमदूतों और राक्षसों के बीच भयानक संघर्ष होने लगा। कुछ यमदूत रावण पर भी शूलों की वर्षा करने लगे। उनके प्रहारों से रावण बुरी तरह घायल हो गया। पुष्पक विमान का तो कुछ न बिगड़ा, पर रावण परेशान हो उठा। उसका कवच कट गया। शरीर से रक्त बहने लगा। उसकी दशा देख, राक्षस भी घबरा गए। वे भाग चले।

तब रावण ने 'ठहरो-ठहरो' कह, उन्हें रोका और पाशुपत नामक दिव्य अस्त्र का संधान किया। छूटते ही वह अस्त्र आग की तरह जल उठा। सब तरफ चकाचौंध हो गई। पाशुपत के प्रभाव से यमराज के सैनिक धराशायी हो गए। एक भी न बचा। यह देख, रावण जोर से हंसा और कहने लगा —"मैंने यमराज को जीत लिया।"

रावण का सिंहनाद सुनकर सूर्यपुत्र यम क्रोध से भर उठे। उनका सारथि तुरंत दिव्य रथ ले आया। स्वयं काल भी वहां उपस्थित हो गया। यह दृश्य देख देवता भी घबरा गए। दिव्य रथ में बैठ, यमराज रावण के पास जा पहुंचे।

यमराज ने प्रहार करके रावण को घायल कर दिया। उत्तर में रावण ने भी यमराज पर बाणों की झड़ी लगा दी। रावण समझ गया कि यमराज को जीतना कठिन है। पर युद्ध भूमि से भागना भी उसे स्वीकार नहीं था। वह फिर से भयानक युद्ध करने लगा।

इस पर काल ने कुपित होकर यमराज से कहा—"आप मुझे अनुमति दें। मैं इस पापी को एक पल में मार डालूंगा।"

इस पर यमराज ने काल को रोका। बोले— "तुम ठहरो। मैं इस पर काल दंड का प्रयोग करूंगा।" उन्होंने रावण पर प्रहार करने के लिए काल दंड हाथ में उठाया, तो चारों ओर अग्नि जल उठी। सब देवता भी यम और रावण के भयानक युद्ध को देख रहे थे।

यमराज काल दंड से प्रहार करना चाहते थे, तभी पितामह ब्रह्मा वहां उपस्थित हो गए। उन्होंने यमराज का हाथ थाम लिया। कहने लगे— "यम, काल दंड चलाने से पहले मेरी बात सुनो। मैंने रावण को वर दिया है कि यह देवताओं के हाथों नहीं मारा जाएगा। अगर तुमने काल दंड चला दिया, तो रावण निश्चय ही मारा जाएगा। तब मेरा दिया वरदान असत्य हो जाएगा। वरदान की मर्यादा नष्ट हो जाए, यह ठीक नहीं।"

यह सुनकर यमराज ने तुरंत काल दंड को नीचे कर लिया। बोले— "आपके वरदान और कालदंड —दोनों ही का सम्मान मेरा धर्म है। अगर इनकी मर्यादा नष्ट हुई, तो फिर हम कहां रहेंगे। और जब मैं इस निशाचर को मार नहीं सकता, तो फिर युद्ध करने से क्या लाभ?" — इतना कहकर यमराज वहां से लोप हो गए।

रावण ने यह समझा कि उसने यम को जीत लिया है। वह लंका लौट आया।

(वाल्मीकि रामायण)

उसकी परीक्षा

—मुरारी बापू

उपमन्यु भगवान शंकर का अनन्य भक्त था। उसने भगवान शंकर की वर्षों तक निराहार रहकर उपासना की थी। भगवान शंकर ने उसे साक्षात दर्शन दिए थे। उसके घोर तप तथा निश्छल हृदय को देखकर,भगवान शंकर उस पर पूरी तरह प्रसन्न थे।

उपमन्यु सबके सामने गर्व से कहा करता—''मैं पूरी तरह भगवान शंकर के लिए समर्पित हूं। वही मेरे इष्टदेव हैं। मैं उनका भक्त हूं। मैंने सब कुछ उन्हीं की कृपा से पाया है।''

एक बार नारद जी घूमते-घूमते उपमन्यु के पास आ पहुंचे। उन्होंने उपमन्यु से कहा—"श्मशान में बसने वाले शंकर की उपासना के चक्कर में तुम क्यों पड़े हो? और भी बड़े-बड़े देवता हैं। उन्हें अपना इष्टदेव बनाकर स्वर्ग का राज्य क्यों नहीं पा लेते?''

उपमन्यु ने उनसे कहा—''देवर्षि, मुझे बड़े से बड़ा लोभ भी भगवान शंकर की उपासना से नहीं हटा सकता। मैं शंकरजी का भक्त हूं। मैं उनके अलावा और किसी से कुछ नहीं मांग सकता।''

नारद जी उपमन्यु के ये शब्द सुनकर चुप बैठने वाले कहां थे? वह भगवान शंकर के पास जा पहुंचे। उनसे बोले—''उपमन्यु आपकी उपासना दिखावे के लिए करता है। यदि मेरा यकीन न हो, तो आप स्वयं उसकी परीक्षा लेकर देखें।''

भगवान शंकर के मन में आया कि 'जब नारद

असली-नकली

—डा. सत्येन्द्र वर्मा

देवताओं और दैत्यों में सदा से शत्रुता रही है। दैत्यों को ऐसे अवसर की तलाश थी जब वे इंद्र पर आक्रमण कर सकें। दैत्य जानते थे कि वे इंद्र को हानि नहीं पहुंचा सकते। फिर भी वे इंद्र को परेशान करने से बाज न आते थे।

एक दिन दोपहर थी। गृत्समद ऋषि की यज्ञशाला में यज्ञ का आयोजन था। यज्ञ कुंड में मंत्रोच्चारण के साथ हवियां डाली जा रही थीं। 'स्वाहा-स्वाहा' का स्वर गूंज रहा था। महात्माओं और ऋषियों के साथ इंद्र भी वहां उपस्थित थे।

यज्ञकुंड में हवि डालते-डालते अचानक ऋषि गृत्समद के हाथ रुक गए। उनके हाथ में हवि थी। किंतु मन किन्हीं विचारों में खो गया। एक ऋषि ने उनसे पूछा—"ऋषिवर,हवि डालते-डालते आपके हाथ क्यों रुक गए?" गृत्समद ने कहा— ''मुझे आभास हो रहा है कि धुनि और चामुरि नामक दैत्य इंद्र को बंदी बनाने यहां आ रहे हैं।''

सहसा धुनि और चामुरि ने इंद्र की खोज में ऋषि गृत्समद की यज्ञशाला पर आक्रमण कर दिया। यज्ञशाला में हलचल मच गई।

ऋषि गृत्समद के मन में अनेक आशंकाएं उठ रही थीं। वह इस समस्या का हल ढूंढ़ने में लगे थे। कुछ देर बाद वह बोले— ''ऋषियो, आप चिंतित न हों। यज्ञ चलने दीजिए। इंद्र की सुरक्षा का उपाय मैंने सोच लिया है।''

इस घोषणा के साथ कुछ ही पलों में ऋषि गृत्समद ने इंद्र का रूप धारण कर लिया।

अब यज्ञशाला में दो इंद्र उपस्थित थे— एक असली इंद्र तथा दूसरे इंद्र के वेश में ऋषि गृत्समद। दोनों इंद्र रूप-रंग और आकार-प्रकार में एक जैसे थे। उनमें अंतर करना कठिन था।

यज्ञशाला में उपस्थित सभी ऋषि और महात्मा आश्चर्य से गृत्समद ऋषि को देखने लगे। इंद्र भी आश्चर्य में पड़ गए।

गृत्समद ऋषि कुछ बोलने ही जा रहे थे कि उन्हें धुनि और चामुरि की आवाजें सुनाई पड़ीं। उन्होंने उपस्थित लोगों से कहा— ''धुनि और चामुरि

जी ऐसा संदेह कर रहे हैं, तो क्यों न उपमन्यु की परीक्षा ले ली जाए?'

शंकरजी ने अपने त्रिशूल को वज्र और नंदी को ऐरावत बना लिया। देवराज इंद्र का वेश बनाकर, उपमन्यु की परीक्षा लेने जा पहुंचे।

अपने सामने साक्षात इंद्र को देखकर, उपमन्यु धन्य-धन्य हो उठा। उसने उन्हें साष्टांग प्रणाम किया। बोला—''मेरा अहोभाग्य है जो आज देवराज ने दर्शन दिए।''

''अहोभाग्य तो मेरा है जो तुम जैसे परम भक्त के प्रति आकृष्ट होकर यहां आया हूं। मेरी इच्छा है कि आज तुम मुझसे जो कुछ भी मांगोगे, मैं तुम्हारी वह इच्छा पूरी करूंगा।''—देवराज ने कहा।

''देवराज, आपके दर्शन और आशीर्वाद ही मेरे लिए पर्याप्त है। मुझ पर भगवान शंकर की पूर्ण कृपा है। मुझे अब कुछ नहीं चाहिए।''—उपमन्यु ने हाथ जोड़कर कहा।

देवराज इन्द्र बोले—''आज ऐसा हो नहीं सकता कि मैं तुम्हें कुछ दिए बिना लौट जाऊं? यदि तुम मेरा राज्य या ऐरावत हाथी भी मांग लोगे, तो तुम्हें समर्पित कर दूंगा।''

उपमन्यु को अब साफ-साफ कहना पड़ा—''देवराज, मैं भगवान शंकर का उपासक हूं, आपका नहीं। मेरे इष्टदेव शंकर हैं। इसलिए मैं अपने इष्टदेव को छोड़कर, दूसरे से भीख क्यों मांगूं?''

उपमन्यु के ये शब्द सुनते ही इन्द्र की जगह भगवान शंकर प्रकट हो गए। उन्होंने उपमन्यु को गले लगा लिया। बोले—''मुझे तुम जैसे समर्पित और सच्चे भक्त पर गर्व है।'' ●

यज्ञशाला के निकट आ गए हैं। मैं उनसे निपटने जा रहा हूं।'' यह कहते हुए वह बाहर निकल पड़े।

यज्ञशाला से बाहर निकलकर गृत्समद तेजी से भागने लगे। वह इंद्र के वेश में थे। उन्हें देखकर धुनि और चामुरि ने समझा कि इंद्र उनसे भय खाकर भाग रहे हैं। अतः वे उन्हीं के पीछे भागने लगे। आगे-आगे गृत्समद तेजी से भाग रहे थे।

अंत में दैत्यों ने दौड़-भागकर गृत्समद को पकड़ लिया। वे एक साथ गृत्समद पर टूट पड़े।

गृत्समद कष्ट से कराह उठे। उन्होंने कहा—''मैं इंद्र नहीं हूं। मेरे प्राण तुम क्यों लेना चाहते हो?'' यह सुन, दोनों दैत्य झुंझला पड़े। बोले—''इंद्र कहां है?''

गृत्समद ने कहा—''इंद्र कहां है, आप दोनों यह जानना चाहते हैं?'' गृत्समद से दैत्यों ने क्रोध में कहा—''हां, हमें बताओ इंद्र कहां है?''

गृत्समद ने दैत्यों से कहा—''इंद्र कहां नहीं है? वह सूर्य के प्रकाश में है। अग्नि के तेज में है।'' इंद्र की प्रशंसा सुनकर दैत्यों के हाथ-पांव फूल गए। वे कांपने लगे। वे मैदान छोड़कर भागने को हुए, तभी इंद्र वहां उपस्थित हो गए। उन्होंने दोनों दैत्यों का वध कर दिया।

इंद्र ने गृत्समद को अपने सखा के पद पर प्रतिष्ठित किया और उन्हें स्वर्ग ले गए। गृत्समद से कुछ मांगने के लिए कहा।

गृत्समद ने उनसे वरदान में शांति, समता, दया और ज्ञान मांगा।

इंद्र ने कहा—''तथास्तु।'' और गृत्समद को मनचाहा वरदान मिल गया। ●

गुफा में

—गोविंदनारायण तिवारी

द्विज गौतम जन्म से ही कुरूप था। उसके पिता का नाम था वृद्ध गौतम। अपनी कुरूपता के कारण द्विज गौतम घर से बाहर नहीं निकलता था। न किसी विद्यालय में गया, न किसी से शिक्षा ली। वह हर समय यही सोचता रहता था—'इस दुनिया में मुझसे अधिक कुरूप कोई और नहीं होगा।'

पिता बेटे के मन की बात खूब समझते थे। वह द्विज गौतम को समझाते रहते थे। द्विज गौतम ने गायत्री और अग्नि की उपासना आरंभ कर दी। उसकी उम्र बढ़ती गई, पर उसने विवाह नहीं किया। किसी ने उसे अपनी कन्या देने का प्रस्ताव भी नहीं किया था।

एक बार द्विज गौतम यात्रा पर गया। वह घने वन से गुजर रहा था। वहां एकाएक वर्षा होने लगी। कुछ देर गौतम एक पेड़ के नीचे खड़ा रहा, पर बारिश तेज होती गई। वह बुरी तरह भीग गया। तभी कुछ दूर पर उसे एक गुफा दिखाई दी। वह तेजी से उस तरफ बढ़ा।

द्विज गौतम जब गुफा के द्वार पर पहुंचा, तो वहां उसे एक बुढ़िया खड़ी दिखाई दी। बुढ़िया ने द्विज गौतम को नमस्कार किया, फिर बोली—''आप तो एकदम भीग गए हैं। अंदर आ जाइए।''

द्विज गौतम गुफा में चला गया। वहां एक तरफ आग जल रही थी। गौतम ने गीले वस्त्र सुखा लिए। बाहर अब भी तेज बरसात हो रही थी। द्विज गौतम सोचने लगा—'इस घने वन में यह बुढ़िया गुफा में क्या कर रही है ?'

तभी बुढ़िया निकट चली आई। उसने गौतम को फल खाने के लिए दिए। आखिर गौतम ने पूछा—''आप यहां अकेली क्या कर रही हैं ? जंगल घना है, उस पर मौसम भी खराब है।''

बुढ़िया मुसकराकर बोली—''मैं तो जन्म से ही इसी गुफा में रहती हूं।''

''इस गुफा में अकेली और जन्म से ! यह तो बड़े आश्चर्य की बात है।''—गौतम ने कहा।

बुढ़िया ने इस का उत्तर न देकर एक विचित्र बात कह दी। बोली—''मैं आपको पति बनाना चाहती हूं। क्या आप मुझे पत्नी के रूप में स्वीकार करेंगे ?''

अब तो गौतम के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। वह कुरूप अवश्य था, पर एक बुढ़िया से विवाह की बात तो उसके मन में आ ही नहीं सकती थी।

गौतम को असमंजस में देख, बुढ़िया ने कहा—''आप मुझे नहीं जानते। गंधर्वराज की कन्या सुश्यामा मेरी मां है और राजा कृतध्वज मेरे पिता। मेरा जन्म इसी गुफा में हुआ था। बाद में मां मुझे छोड़कर गंधर्व लोक चली गई। जाते समय मां ने कहा था—''जो भी पुरुष इस गुफा में प्रवेश करेगा, वही तेरा पति होगा।''

''तो क्या इससे पहले कोई पुरुष गुफा में नहीं आया ?''—द्विज गौतम ने पूछा।

''आप प्रथम पुरुष हैं जो इस गुफा में आए हैं। आपको देखकर मुझे मां की बात याद आ गई। इसीलिए मैंने आपसे विवाह का प्रस्ताव किया है। मैंने देवी सरस्वती, वरुण और अग्नि को अपनी साधना से प्रसन्न कर रखा है।'' इसके बाद सुश्यामा की बेटी सूर्य की उपासना करने लगी। उसने सूर्य को प्रसन्न किया। उनसे प्रार्थना की—''द्विज गौतम की कुरूपता नष्ट हो जाए।''

सूर्य के आशीर्वाद से द्विज गौतम का शरीर कांतिपूर्ण होकर चमकने लगा। वह सुंदर बन गए। उन्होंने देवताओं को साक्षी मानकर सुश्यामा की बेटी से विवाह कर लिया। दोनों पति-पत्नी, वन में कुटिया बनाकर रहने लगे।

एक बार वन में जाते हुए कुछ ऋषियों ने गौतम की पत्नी पर कटाक्ष किया। कहा—''दोनों पति-पत्नी तो बिल्कुल नहीं लगते हैं।'' इस पर द्विज गौतम का मन बहुत दुखी हुआ। वह नदी के तट पर तपस्या करने लगे।

तप के प्रभाव से पत्नी का बुढ़ापा दूर हो गया।

(ब्रह्म पुराण)

नए पंख

—स्नेह अग्रवाल

जटायु और संपाती दो भाई थे। वे गरुड़ के समान बड़े आकार के पक्षी थे। उन्हें अपनी शक्ति के बारे में गर्व हो गया। इन्होंने सोचा—'हम तो उड़कर कहीं भी जा सकते हैं।' दोनों भाई आकाश में सूर्य की ओर उड़ चले।

जटायु और संपाती सूर्य का पीछा करते-करते विंध्याचल तक पहुंच जाना चाहते थे। सूर्य के कुछ निकट पहुंचे तो ताप से जटायु के पंख जलने लगे। संपाती ने उसे अपने पंखों में छिपा लिया। जटायु बच गया पर संपाती के पंख जल गए। वह उड़ने लायक नहीं रहा। विंध्य पर्वत पर जा गिरा और अचेत हो गया। कई दिन बाद उसे कुछ होश आया। संपाती किसी तरह घिसट-घिसटकर महामुनि निशाकर की गुफा में गया।

निशाकर मुनि ने उसे खाने-पीने को दिया। वह संपाती से बोले—"तू बहुत जल गया है। अभी ठीक नहीं हो सकता। तुझे बिना पंखों के ही इस पर्वत पर रहना होगा। यहां रहकर कई तरह से उपकार के काम तू कर सकेगा। भविष्य में जब दशरथ-पुत्र राम की पत्नी का हरण होगा, तो उसे खोजते हुए वानर यहां आएंगे। उन्हें तू सही जानकारी देगा। उसके बाद तेरे पंख निकल आएंगे।"

संपाती वहीं रहने लगा। वह उड़ नहीं सकता था, इसलिए उसका पुत्र सुपार्श्व उसके लिए भोजन जुटाया करता था। एक शाम सुपार्श्व भोजन लिए बिना ही पिता के पास पहुंचा, तो संपाती गुस्से से आगबबूला हो उठा। उसने सुपार्श्व से पूछा। वह बोला—"आज कोई काला राक्षस एक सुंदर नारी को लिए चला जा रहा था। वह स्त्री विलाप कर थी। 'हा राम, हा लक्ष्मण' पुकारती जाती थी। मैं यह देखकर बहुत दुखी हुआ। इस उलझन में आपके लिए भोजन भी न ला पाया।"

बाद में सीता को खोजते हुए हनुमान, अंगद आदि वहां आए। वे बातचीत में जटायु का नाम ले रहे थे। संपाती ने उनसे अपने भाई के बारे में जानना चाहा। हनुमान ने बताया कि रावण ने उसे मार डाला है। संपाती यह जानकर बहुत दुखी हुआ। फिर उसने ध्यान लगाया। दिव्य दृष्टि से सीता को रावण की नगरी में देखा। वानरों को सही स्थिति के बारे में बताया। उनका पथ निर्देश किया। तभी देखते ही देखते संपाती के नए पंख आए। उसने वानरों से कहा—"देखिए, निशाकर मुनि की बात सच हुई है। अब आप जाकर सीताजी को खोज निकालिए।" इतना कहकर संपाती नए पंखों की सहायता से आकाश में उड़ गया।

(वाल्मीकि रामायण)
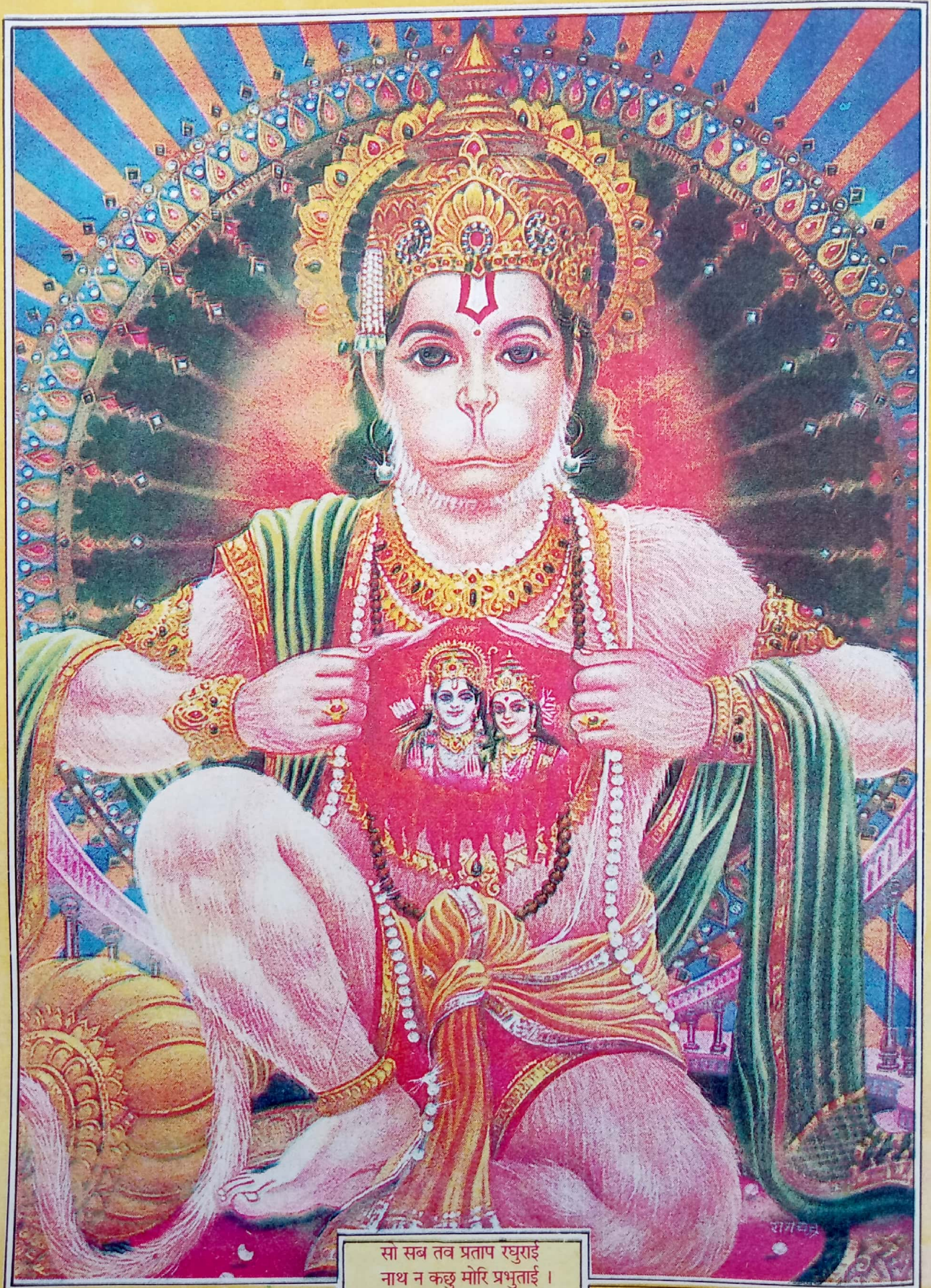
सो सब तव प्रताप रघुराई
नाथ न कछु मोरि प्रभुताई ।
— श्रीहनुमान
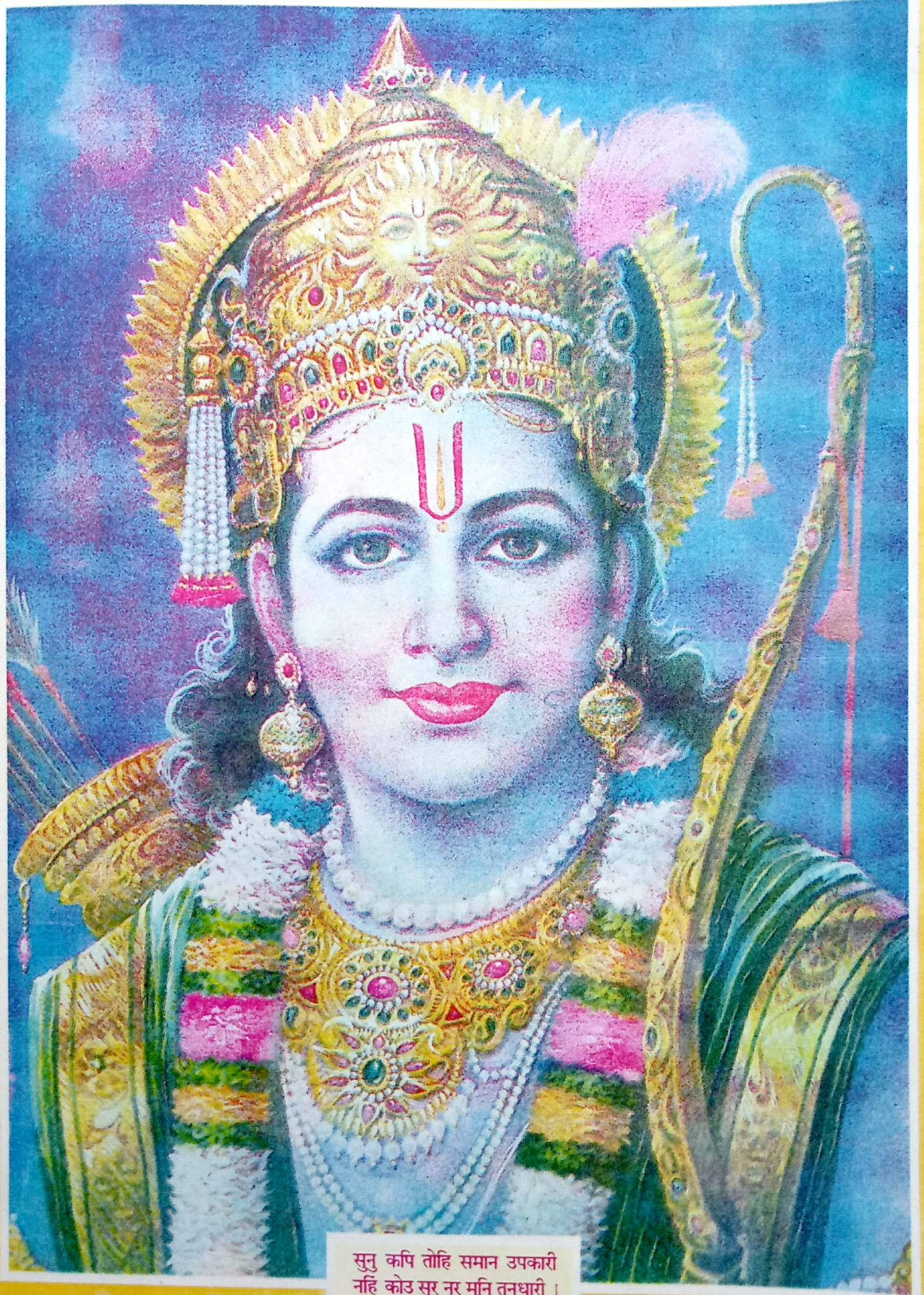
सुनु कपि तोहि समान उपकारी
नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी ।
— श्रीराम

बुढ़िया के तिल

— देवलीना केजरीवाल

वाराणसी में ब्रह्मदत्त नाम के एक राजा थे। राजा ब्रह्मदत्त का एक पुत्र था—ब्रह्मदत्त कुमार। उन दिनों राजकुमारों को दूसरे राज्य में विद्या-अध्ययन के लिए जाना पड़ता था।

ब्रह्मदत्त कुमार जब कुछ बड़ा हुआ, तो राजा ब्रह्मदत्त ने बेटे को बुलाया। उसे एक जोड़ी चप्पल, पत्ते से बना हुआ एक छाता और एक हजार कांसे के सिक्के दिए। बोले—"पुत्र ! तुम तक्षशिला जाओ। गुरु के घर पर रहकर विद्या पढ़ो।"

कुमार तक्षशिला के लिए रवाना हो गया। वह वहां एक आचार्य के घर गया। आचार्य उस समय घूम रहे थे। कुमार ने उन्हें देखा और चप्पलें उतार दीं। सिर पर से छाता हटा लिया। आचार्य को प्रणाम किया। कुमार को थका-हारा देख आचार्य ने एक शिष्य को बुलाया। उससे कुमार के भोजन की व्यवस्था करने को कह दिया।

पहर भर बाद कुमार आचार्य के पास गया। आचार्य ने कुमार से पूछा—"वत्स, तुम कहां से आए हो ?" कुमार ने कहा—"आचार्य, मैं वाराणसी से आ रहा हूं।" आचार्य ने फिर पूछा—"तुम किसके पुत्र हो ? किस लिए यहां आए हो ?"

कुमार ने कहा—"आचार्य ! मैं विद्यार्जन के लिए यहां आया हूं।"

आचार्य ने पूछा—"तुम क्या दक्षिणा देकर विद्या प्राप्त करना चाहते हो या धर्मांतेवाक्षिक बनोगे ?"

कुमार कुछ न बोला, तो आचार्य ने कहा—धर्मांतेवाक्षिक वह होता है, जो घर-गृहस्थी के कार्य में मदद करता है और शाम को पढ़ाई करता है। जो विद्यार्थी दक्षिणा दे सकते हैं, मैं उन्हें पुत्र के समान शिक्षा देता हूं।" कुमार ने कहा—"आचार्य, मैं दक्षिणा साथ लेकर आया हूं।"

कुमार आचार्य के घर रहने लगा। आचार्य उसे विद्याभ्यास कराने लगे।

एक दिन कुमार आचार्य के साथ नदी में नहाने गया। उसने देखा सड़क के किनारे एक बुढ़िया तिल को भिगोकर उसका छिलका निकाल रही है और उसे धूप में सुखा रही है। तिल देखकर कुमार का मन ललचा उठा। उसने झट एक मुट्ठी तिल उठाकर खा लिए। बुढ़िया ने सोचा—'बालक को तिल खाने की बड़ी इच्छा हुई होगी।' इसलिए वह कुछ बोली नहीं।

दूसरे दिन भी कुमार बुढ़िया के तिल मुट्ठी में भर कर खा गया। बुढ़िया कुछ नहीं बोली। पर तीसरे दिन भी जब कुमार ने तिल मुट्ठी में भरे, तो बुढ़िया खड़ी हो गई। वह जोर-जोर से बोलने लगी—"देखो आचार्य अपने विद्यार्थियों से मेरा सामान लुटवा रहे हैं।"

यह सुनकर आचार्य बुढ़िया से बोले—"क्या बात है मां ?"

बुढ़िया बोली—"आचार्य, आपका यह विद्यार्थी पिछले तीन दिनों से मुट्ठी भर के तिल खा रहा है।"

आचार्य ने कहा—"आप शांत हो जाइए। मैं आपको तिल की कीमत दिलवा देता हूं।"
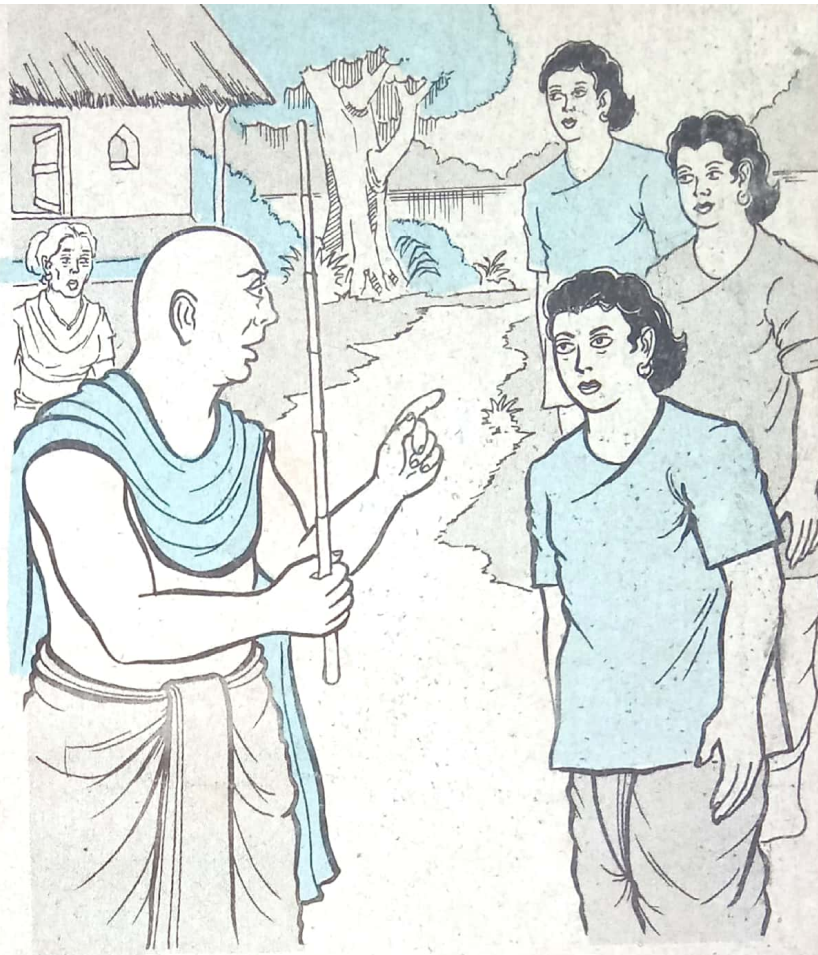
बुढ़िया बोली—"आचार्य, मुझे तिल की कीमत नहीं चाहिए। पर आगे से यह शिष्य ऐसा न करे, आप उसे समझा दें।"

आचार्य ने दो शिष्यों से कहा कि वे कुमार को पकड़कर रखें। फिर गरजकर बोले—"सवधान ! फिर कभी इस तरह की शैतानी मत करना।" कहते हुए उन्होंने एक बेंत से कुमार की पिटाई कर दी।

कुमार आचार्य को गुस्से से देखने लगा। पर थोड़ी देर बाद वह गुस्सा भूल, पढ़ाई में लग गया।

दिन बीतने लगे। कुमार ने मन लगाकर शिक्षा पूरी की। पर आचार्य की पिटाई को वह नहीं भूला। उसने मन ही मन प्रतिज्ञा की कि समय आने पर वह आचार्य से जरूर बदला लेगा।

कुमार वाराणसी लौटने लगा, तो उसने आचार्य के चरण छुए। बोला—"गुरुदेव, जब मुझे राजपद मिलेगा, तो मैं आपके पास दूत भेजूंगा। कृपा करके आप मेरे राज्य में जरूर आइएगा।" कुमार के भक्ति भाव को देखकर आचार्य ने हां कर दी।

वाराणसी पहुंचकर कुमार ने अपने माता-पिता

को अपने अध्ययन के बारे में बताया। राजा ने सोचा— 'क्यों न मैं इस योग्य पुत्र को अपने जीवन काल में ही राज-गद्दी सौंप दूं?'

ऐसा ही हुआ। राजा ने एक दिन कुमार को राज सिंहासन पर बैठा दिया।

कुमार गद्दी पर बैठते ही आचार्य को दंड देने की सोचने लगा। एक दिन आचार्य को बुलाने के लिए उनके पास अपना दूत भेजा। दूत राजा का संदेश लेकर आचार्य के पास पहुंचा। आचार्य से उसने दरबार में चलने के लिए कहा। उन्होंने सोचा—'यह नया राजा जब तक नई उमर का रहेगा, तब तक इसका क्रोध शांत नहीं होगा।' यह सोचकर आचार्य ने उस समय वाराणसी जाना उचित नहीं समझा। दूत को समझा-बुझाकर वापस भेज दिया।

बहुत समय बाद जब ब्रह्मदत्त कुमार प्रौढ़ हो गया, तब एक दिन आचार्य ने सोचा—'हो सकता है, अब कुमार का क्रोध शांत हो गया हो। राजा के पास चलना चाहिए।'

यह सोचकर, आचार्य तक्षशिला से वाराणसी पहुंचे। महल के द्वार पर पहुंच कर उन्होंने अपने आने की खबर राजा को भिजवा दी।

खबर मिलते ही राजा ब्रह्मदत्त कुमार खुश हुआ। आचार्य को लाने के लिए एक ब्राह्मण भेजा।

आचार्य को देखते ही राजा ब्रह्मदत्त कुमार का क्रोध फिर उभर आया। उसने मंत्री से कहा—''यह वही आचार्य हैं, जिन्होंने पढ़ते समय मेरी बेंत से पिटाई की थी। उस घटना की याद आने पर पीठ पर, मुझे अभी भी दर्द होता है। आज इनके जीवन का अंतिम दिन है।''

यह सुनकर आचार्य ने कहा—''महाराज, आप अपने विवेक का उपयोग कीजिए। इस समय आपको क्रोध करना उचित नहीं है। यदि उस समय मैं आपको दंड न देता, तो आप मिठाई, फल और अपने पसंद की चीज चुराने के आदी हो जाते। फिर चोरी में निपुण हो जाते। लोगों के घरों में सेंध लगाते। डकैती करते। किसी दिन पकड़े जाते, तो राजा के सामने आपको उपस्थित किया जाता। आपको दंड मिलता। आज आप राजा हैं क्योंकि उस समय आप मेरे दंड से सुधर गए थे।''
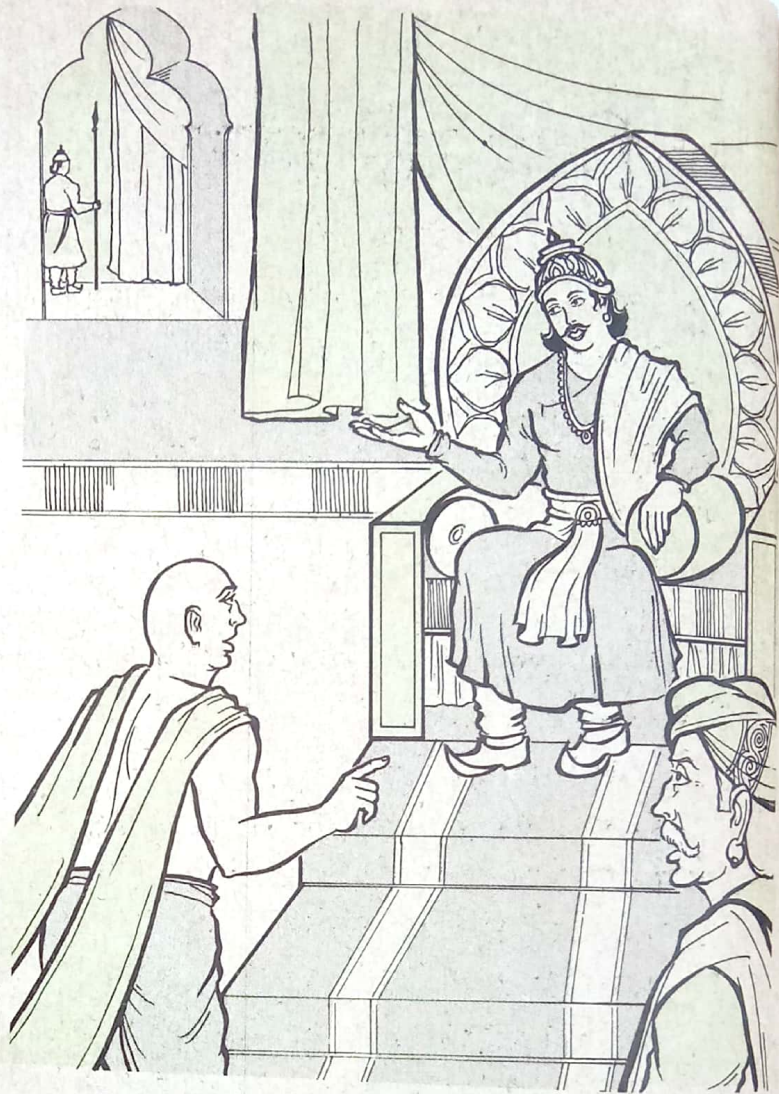
आचार्य की बात सुनकर मंत्री ने राजा से कहा—''महाराज, आचार्य की बात सच है। उनकी कृपा से ही आज आप राजा हैं।''

राजा ब्रह्मदत्त कुमार को आचार्य की बात समझ में आ गई। वह बोला—''गुरुदेव, मैं अज्ञानी हूं। मुझे क्षमा करें। यह राज्य, ऐश्वर्य सब कुछ मैं आपके चरणों में अर्पित करता हूं।'' —कहते हुए वह राजा आचार्य के चरणों में गिर पड़ा।

आचार्य ने कहा—''महाराज, मुझे राजपाट की आवश्यकता नहीं है। मैं जैसा हूं, उसी में सुखी हूं।''

ब्रह्मदत्तकुमार ने आचार्य को राज पुरोहित बना दिया। आचार्य का परिवार भी उन्हीं के साथ रहने लगा था।

(जातक)

शिव की सेना

—चंद्रदत्त 'इन्दु'

दो बलशाली राक्षस थे-हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष। ये दोनों भाई थे। इन्होंने देवों पर चढ़ाई कर, इंद्रलोक को भी जीत लिया। मगर समय की गति बलवान है। हिरण्याक्ष एक नौका दुर्घटना में मारा गया। हिरण्यकशिपु को नृसिंह देव ने मारा था। हिरण्यकशिपु के मरने के बाद उसका बेटा प्रह्लाद सिंहासन पर बैठा, मगर भगवान भक्त प्रह्लाद को हिरण्याक्ष के बेटे अंधक ने हराकर उससे राज्य छीन लिया। अंधक ने प्रह्लाद को बंदी बना लिया और स्वयं असुरों का राजा बन बैठा।

अंधक के मन में देवों के लिए पुराना बैर था। उसने अपनी सेना की शक्ति बढ़ा ली और अमरावती पर चढ़ाई करने की तैयारी करने लगा। इंद्र को यह बात पता चली, तो वह चिंतित हो उठा। इंद्र जानता था कि अकेले देव इतने शक्तिशाली नहीं जो अंधक और उसकी विशाल सेना का सामना कर सकें। इसीलिए इंद्र ने निश्चय किया कि वह मनु की प्रतापी संतानों को अपनी सहायता के लिए बुलाए। उस समय धरती पर दक्ष प्रजापति जैसे प्रतापी राजा थे।

इंद्र ने नारद को बुलाया। कहा—"तुम, अश्विनीकुमार और अतिरथ दक्ष प्रजापति के पास जाओ। देवों पर विपत्ति के बादल घिरे हैं। उनसे कहो कि इस युद्ध में वह हमारी सहायता करें।"

प्रजापति दक्ष की राजधानी महान नदी सरस्वती के तट पर थी। नारद और उनके साथी वहां पहुंचे। शाम का समय था। उन्हें पता चला कि इस समय दक्ष अपनी बड़ी बेटी सती और पत्नी वीरिणी के साथ सरस्वती तट पर घूमने गए हैं। नारद ने सोचा—'जरूरी काम है। महल में बैठकर प्रतीक्षा करने से विलम्ब हो जाएगा।' इसीलिए वह दक्ष से मिलने नदी तट की ओर चल पड़े।

कुछ ही दूर चलने पर उन्होंने एक तेजस्वी पुरुष को नदी के तट पर टहलते हुए देखा। उनकी बगल में एक प्रौढ़ा और एक युवती चल रही थी। युवती की सुंदरता देखकर अतिरथ बोला—"नारद, यह अप्सराओं में श्रेष्ठ युवती यहां कैसे आ गई?"

नारद हंसकर बोले—"मित्र, यह प्रजापति दक्ष की बड़ी पुत्री सती है। कुछ ही दिनों में इसका विवाह होने वाला है। पता नहीं, किस भाग्यशाली को यह वरण करेगी और दूसरी है दक्ष की पत्नी वीरिणी।"

नारद आगे बढ़े। दक्ष के पीछे जाकर कहा—"दक्ष प्रजापति, मैं नारद देवलोक से आया हूं।"

दक्ष ने पूछा—"कहो, देवराज इंद्र तो कुशल हैं। अमरावती के क्या हाल-चाल हैं?"

नारद ने कहा—"देवराज तो कुशल हैं, किंतु एक संकट इंद्रलोक पर मंडरा रहा है। इसी कारण मैं इंद्र का संदेश लेकर यहां आया हूं।"

इसके बाद नारद ने अंधक के हमले के सम्भावित खतरे की बात बताते हुए कहा—"देवता एक युद्ध में उससे हार चुके हैं। वह फिर आगे बढ़ता चला आ रहा है।"

—"इंद्र की सहायता करना मेरा सौभाग्य होगा। मैं सेना सहित जरूर आऊंगा।" दक्ष की बात सुनकर नारद ने कहा—"आपसे ऐसी ही आशा थी। हमने धरती के दूसरे राजाओं को भी बुलवाया है। ऐसा कौन है, जिसकी सहायता हमारे लिए जरूरी है।"

दक्ष ने कहा—" एक विलक्षण व्यक्ति है, जिसका प्रभाव जन जातियों पर बहुत है। वह शिव के नाम से जाने जाते हैं। सब मनुष्य उन्हें देवाधिदेव मानकर पूजते हैं। तप, बुद्धि और योग में उनसे बढ़कर कोई नहीं। यदि वह इंद्र की सहायता करने को तैयार हो जाएं, तो देवों की निश्चित विजय होगी।"

"मुझे विश्वास है कि नारद यह कार्य अवश्य कर पाएंगे।" —अतिरथ ने कहा। दक्ष ने मुसकराकर कहा—"मैं नारद के गुणों से भलीभांति परिचित हूं, पर तुम शिव को नहीं जानते। वह प्रकांड पंडित हैं। वह महान शिल्पी भी हैं। उन्हें अनेक सिद्धियां प्राप्त हैं। उनकी नगरी काशी इस धरती की अनुपम नगरी

है। असुर, नाग, यक्ष और गंधर्व भी उनकी पूजा करते हैं।''

दक्ष की बात का सभी पर प्रभाव पड़ा। सती ने पूछा—''पिता जी, अगर ऐसा व्यक्ति हमारी सहायता करे, तो विजय निश्चित ही है।''

नारद ने शंका प्रकट की—''मैंने शिव का नाम सुना है, मगर वह तो असुरों के पक्षपाती हैं।''

—''नहीं, ऐसा नहीं है। शिव देव और असुरों से अलग हैं। देव उनसे घबराते हैं। इसीलिए उनसे अलग रहते हैं, मगर असुर बड़े चतुर हैं। असुर उनकी शरण में जाकर उनसे वरदान पाते रहे हैं। इसी से वे बलशाली बने हैं।''

सती ने फिर पूछा—''देवों ने उनको प्रसन्न क्यों नहीं किया ?''

दक्ष गम्भीर हो गए। बोले—''देव अहंकार में डूबे रहे। मगर यह सत्य है कि यदि शिव प्रसन्न हो गए, तो देवासुर संग्राम हमेशा के लिए समाप्त हो जाएगा।''

दक्ष को यह पता नहीं था कि उनकी बात का सती पर क्या प्रभाव पड़ रहा है। वास्तव में शिव की महानता जानकर सती अनजाने में शिव की ओर आकर्षित हो रही थी।

नारद ने दक्ष से कहा—''प्रजापति, ''मैं पूरा प्रयत्न करूंगा कि शिव को देवों की ओर कर सकूं। मगर यह बताओ कि शिव कहां मिलेंगे ? क्या हम काशी जाएं ?''

''तुम काशी की ओर जाओ। क्या पता, रास्ते में शिव मिल जाएं। लोगों का यही कहना है कि शिव को मन से याद करो,तो वह मिल जाते हैं।''—दक्ष ने कहा।

अगले दिन नारद और उनके साथियों ने काशी की ओर प्रस्थान कर दिया। आगे एक घना जंगल था। सहसा एक जगह बहुत से स्त्री-पुरुषों ने उन्हें घेर लिया। उनके हाथों में तेज धार वाले हथियार थे। दक्ष ने अपना एक सेवक रास्ता दिखाने के लिए उनके साथ भेजा था। उसका नाम करंथ था। करंथ ने उन लोगों से उन्हीं की भाषा में कहा—''हम अपके मित्र हैं। हम महान योगीराज शिव के भक्त हैं। उनसे मिलने जा रहे हैं।''

शिव का नाम सुनते ही उन लोगों ने अपने हथियार नीचे कर लिए। फिर उनके मुखिया ने पूछा—''तुम लोग शिव के पास क्यों जा रहे हो?''

''हम पर भीषण आपत्ति आ पड़ी है। हम शिव की सहायता लेने आए हैं। हमें शिव कहां मिलेंगे ?''—नारद ने मुखिया से पूछा।

मुखिया ने कहा—''यह तो मुझे भी पता नहीं। फिर भी मैं आप लोगों का संदेश बस्ती-बस्ती पहुंचाए देता हूं। हो सकता है कि शिव तक यह संदेश पहुंच जाए।''

और सचमुच हुआ भी यही। अगले दिन वे एक बस्ती में थे, तभी 'जय महादेव' का नारा गूंज उठा। नारद ने देखा कि बाघाम्बर पहने एक तेजस्वी पुरुष हाथ में त्रिशूल लिए चले आ रहे हैं। उनके विशाल नेत्रों से इतना तेज टपक रहा है कि दृष्टि बरबस नीचे झुक जाती है। उन्हें देखते ही सब प्राणियों ने जमीन पर लेटकर उन्हें प्रणाम किया।

शिव आगे बढ़े। नारद के पास जाकर उन्होंने कहा—''कहो नारद, कैसे आना हुआ ?''

नारद ने हाथ जोड़कर कहा—''भगवन, देवों पर भयंकर विपत्ति आ रही है। मुझे इंद्र ने भेजा है। आप ही देवों की रक्षा करें।''

शिव हंसे—''हिरण्याक्ष और हिरण्यकशिपु से हारकर देवों को अब इस मानव लोक की याद आई है।''

सुनकर नारद का सिर झुक गया। शिव फिर बोले—''मैं जानता हूं कि शक्ति पाकर असुर अन्यायी हो उठे हैं। किंतु याद रखना—यह धरती सभी की है। देव, असुर, मानव सभी इस धरती पर मिलकर रहेंगे।''

''हम भी यही चाहते हैं।''—नारद बोले।

शिव फिर हंसे, बोले—''नारद, अंधक का काल उसके सिर पर नाच उठा है। मैं युद्ध में आऊंगा।''

कहकर शिव चले गए। पता ही न चला कि क्षण भर में कहां लोप हो गए।

शीघ्र ही एक विशाल घाटी में दोनों सेनाओं की मुठभेड़ हो गई। अंधक विशाल सेना लेकर आया था। उधर देवों की शक्ति भी कम नहीं थी।

शिव का त्रिशूल अनेक योद्धाओं का रक्त पी चुका था। उनकी सेना भूतों के समान शत्रु सेना में घुस गई। वे भयानक संहार कर रहे थे। सिर काट-काटकर उन्हें गेंदों की तरह उछाल रहे थे।

तभी शिव ने इंद्र की ओर इशारा किया। इंद्र तुरंत आए। शिव बोले—"देवराज, इतना हत्याकांड व्यर्थ है। हमारा उद्देश्य शत्रु को हराना है। व्यर्थ रक्त बहाना नहीं।"

इंद्र कुछ नहीं समझे।

शिव ने त्रिशूल छोड़कर धनुष उठा लिया। फिर बोले—"अंधक कहां है? मुझे बताओ।"

शिव का रौद्र रूप देखकर इंद्र भी कांप उठे। बोले—"भगवन, वह बिजली के समान अश्व पर मुकुट लगाए, जो तेजी से मारकाट मचाता घूम रहा है, वही अंधक है। लेकिन वह दूर है। निशाना लगाना कठिन है।"

शिव ने मुसकराकर इंद्र की ओर देखा। फिर प्रत्यंचा खींचकर बाण छोड़ दिया। बाण बाज पक्षी की तरह लपका और पल भर में अंधक का सिर जमीन पर लोटने लगा।

युद्ध समाप्त होगया। इंद्र प्रसन्न था। वह शिव को धन्यवाद देने के लिए देवों को लेकर चला, मगर तभी उसे मालूम हुआ कि शिव अपनी सेना के साथ अंतर्धान हो गए।

इस युद्ध के बाद देव सभा जुड़ी। सभी ने इस देवासुर संग्राम में दक्ष प्रजापति की वीरता की सराहना की। फिर निश्चय हुआ कि देवों की एक विशेष सभा बुलाई जाए। उसमें शिव को आमंत्रित किया जाए।

अग्नि ने कहा—"युद्ध में विजय हमें शिव के कारण मिली। हमें उनका धन्यवाद करना चाहिए।"

दक्ष ने भी इसका अनुमोदन किया। सभी देवों ने एक स्वर से कहा—"हमें शिव को बुलाकर उन्हें धन्यवाद देना चाहिए।" इसी सभा में दक्ष ने अपनी पुत्री सती के स्वयंवर की घोषणा की। सभी देवों और राजाओं से स्वयंवर में पधारने की प्रार्थना की। स्वयंवर दस दिन बाद होना था।

देव सभा से लौटने के बाद दक्ष ने अंधक के वध की बात बताई, तो शिव के पराक्रम की बात सुनकर सती मन ही मन कुछ सोचने लगी। स्वयंवर का दिन भी आ पहुंचा। सती जैसी सुंदर पत्नी पाने के लिए सभी देव और मानव वहां विराजे थे।

तभी शंख ध्वनि हुई। ठीक समय पर सजी-धजी सती वरमाला लिए स्वयंवर में आई। उसकी मां साथ में थी। साथ में एक चारण चल रहा था, जो वहां बैठे देवों और राजाओं की एक-एक करके कीर्ति बखान करता जा रहा था। सती हर उम्मीदवार के आगे रुकती। हाथ जोड़कर नमस्कार करती, फिर आगे बढ़ जाती। इसी तरह धीरे-धीरे वह सभी के आगे गई, मगर वरमाला किसी के गले में नहीं डाली।

फिर वह अपने पिता के पास लौट आई। बोली—"पिता जी, आप एक महापुरुष को बुलाना भूल गए।"

"नहीं, मैंने हर योग्य व्यक्ति को बुलाया है।"—दक्ष ने कहा।

"आप देवाधिदेव शिव को बुलाना भूल गए पिता जी। वह महान योगीराज हैं। उन्होंने एक ही बाण से अंधक का सिर काट दिया। मैं उन्हें वरण कर चुकी हूं। अब यह वरमाला उन्हीं के लिए शून्य में उछालती हूं। मैं प्रार्थना करती हूं कि वह इसे स्वीकार करें।"

सहसा बिजली के समान शिव प्रकट हो गए। वह वरमाला उन्होंने अपने गले में धारण कर ली। दक्ष को देव होने का अहंकार था, इसलिए उन्होंने शिव को नहीं बुलाया था। फिर भी शिव की शक्ति को वह जानते थे। इसीलिए अनमने पन से यह सम्बंध स्वीकार तो कर लिया, मगर अपमान की एक कसक उनके मन में चुभी रह गई।

(ऋग्वेद)

कवि एक : रंग अनेक

रामेश्वर दयाल दुबे

मीठी बोली

म्याऊं-म्याऊं बिल्ली करती, कुत्ता भों-भों करता।
ढेंचू-ढेंचू गदहा करता, बंदर खों-खों करता।
घोड़ा सदा हिनहिनाता है, गायें बां-बां करतीं।
बकरी में-में कर मिमियाती, भेड़ें बें-बें करतीं।
सबकी बोली अच्छी लगती, मगर न उतनी प्यारी।
जितनी मीठी मुझको लगती मां की बोली प्यारी।
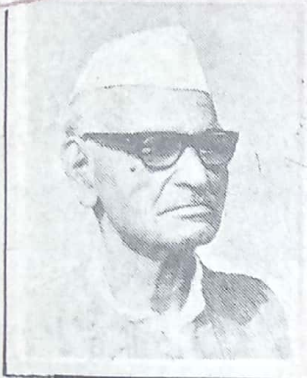
राजू की जेब

मजेदार है बड़ा खजाना, यह राजू की जेब।
भर लेना उसमें ही सब कुछ, है राजू की टेव।
चिकना पत्थर, टूटी पैंसिल,
बटन, कील, चमकीला कागज।
छोटा शंख, तार का टुकड़ा
इंजेक्शन की खाली शीशी।
दियासलाई की डिब्बी में
भरे हुए इमली के चाए।
प्लास्टिक की छोटी-सी थैली,
टूटा पैन, कांच की गोली।
चाकलेट का कागज नीला,
हरा पंख तोते का छोटा।
चमकदार छोटी-सी सीपी,
लाल, हरे, नीले कुछ डोरे।
भरी खचाखच जेब, न इसको भाई छूना।
यह न जेब है, संग्रहालय का एक नमूना!

खोटा सिक्का

आओ, तुम्हें सुनाएं अपनी बात बहुत ही छोटी,
किसी तरह आ गई हमारे हाथ अठन्नी खोटी।
रहा सोचता बड़ी देर तक, पर न याद कुछ आया,
किसने दी, कैसे यह आई ? अच्छा धोखा खाया।
जो हो, अब तो चालकी से होगा इसे चलाना,
किंतु सहज है नहीं आजकल मूरख बुद्धू पाना।
साग और सब्जी लेने में उसे खूब सरकाया,
कभी सिनेमा की खिड़की पर मैंने उसे चलाया।
कम निगाह वाले बूढ़े से मैंने चाय खरीदी,
बेफिक्री से मनीबैग से वही अठन्नी दे दी।
किंतु कहूं क्या ! 'खोटी' कहकर सबने ही लौटाई,
बहुत चलाई, नहीं चली वह लौट जेब में आई।

मैं आऊं !

बिल्ली बोली— म्याऊं-म्याऊं ! अगर कहो तो भीतर आऊं ?
बढ़िया घर में तुम रहते हो, बोलो, भला कहां मैं जाऊं ?
जितने भी घर सब मेरे घर, इसीलिए सब घर में जाऊं।
घर-घर में क्यों कुत्ते पाले ? उन्हें देखकर मैं डर जाऊं।
तुम खाते हो दूध-मलाई, तुम्हीं बताओ मैं क्या खाऊं ?
तुम खाते मेरा भी हिस्सा, क्यों न भला फिर मैं भी खाऊं ?
कैसे साफ रहा जाता है, सीखो तो मैं तुम्हें सिखाऊं।
हिंदी आती, इसीलिए तो 'म्याऊं' नहीं कहूं, 'मैं आऊं'!

छाया

मैं उठता हूं, वह उठती है,
मैं चलता, वह चलती।
मैं दौड़ूं तो साथ दौड़ती,
सदा साथ ही रहती।
पकड़ूं तो मैं पकड़ न पाता,
अजब खेल है उसका।
हाथ न आए, साथ न छोड़े,
यह स्वभाव है किसका ?
जल्दी से तुम नाम बताओ
नहीं समझ में आया ?
मैं ही तुम्हें बताए देता,
वह है मेरी छाया।
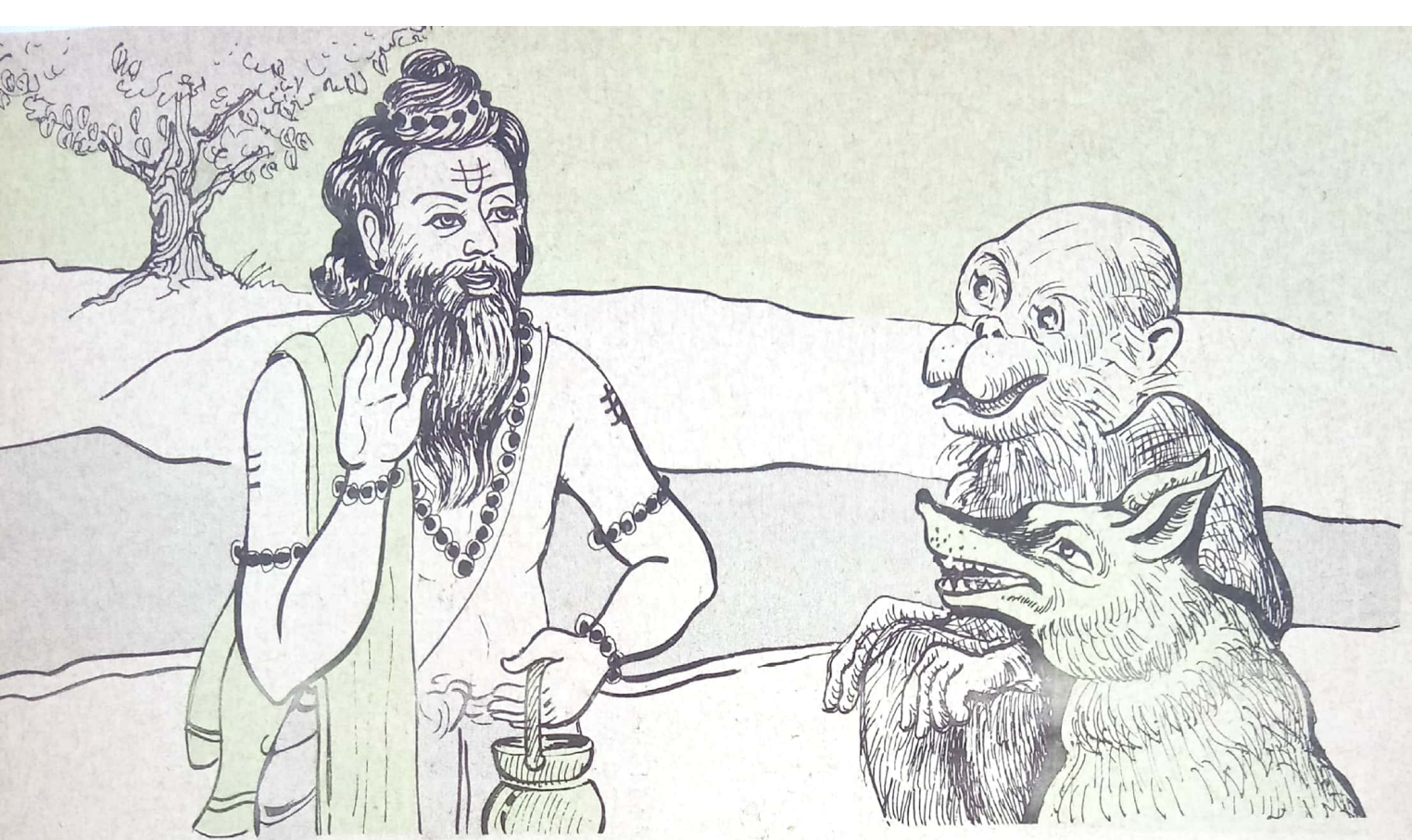
पिछला जन्म

—मधुर शास्त्री

एक जंगल था, जिसमें अनेक पशु-पक्षी रहते थे। वहां एक सियार और बंदर हर रोज मिलते थे। कुछ समय बाद दोनों मित्र बन गए। इन दोनों की अपनी-अपनी विशेषताएं थीं। इनमें एक ऐसा गुण था जो प्रायः प्राणियों में नहीं मिलता। इन दोनों को अपने पिछले जन्म का सारा वृत्तांत याद था।

धीरे-धीरे वे जितने निकट आते गए, उतना ही एक-दूसरे के बारे में जानने को उत्सुक हो गए। दोनों ऐसे अवसर की खोज में थे कि स्वयं अपना-अपना रहस्य खोलें। मित्र होने के कारण दिन भर के अनुभव तो बताते, परंतु पिछले जन्म के बारे में कभी कोई बात न होती। कभी पास से और कभी दूर से दोनों एक-दूसरे की गतिविधियों पर नजर गड़ाए रहते। जब पास होते, तो दोनों अपनी चालाकियों के किस्से सुनाते। वानर का एक पुण्य अधिक था, इसलिए वह कुछ अधिक जानता था। दोनों इधर-उधर घूमने लगे।

एक बार वानर श्मशान के पीपल पर बैठा था कि उसने सियार को देखा। वानर ने सियार से पूछा—"आप किस पाप के कारण इस जन्म में सियार बने हैं ?"

वानर की बात सुनकर सियार शरमा गया। उसने अपनी गर्दन नीची कर ली। सियार को अपना पुनर्जन्म याद आ गया। उसने अपनी कहानी कहनी आरम्भ की—"तुमने ठीक ही कहा है, यह जन्म मुझे पाप के कारण ही मिला है। पहले जन्म में मैं वेदों का पंडित, विद्वान ब्राह्मण था। मैं वेद शर्मा के नाम से जाना जाता था। चारों ओर मेरी प्रसिद्धि थी। लोग मेरा आदर करते थे। मुझे बहुत धन देते थे। अधिक धन आ जाने से मेरे मन में लोभ समा गया।

"एक दिन एक गरीब ब्राह्मण मेरे द्वार पर आया। उसे पता था कि मेरे पास बहुत धन है। उस गरीब ब्राह्मण ने मुझसे धन मांगा। मैंने उसे धन देने का वचन दे दिया। वचन तो दे दिया, परंतु भीतर लोभ का राक्षस मेरे मन में बैठा था। मैं नहीं चाहता था कि मैं अपना धन किसी को यूं ही दे दूं। इसलिए मैं उपाय सोचने लगा। जैसे ही वह ब्राह्मण धन लेने के लिए आया, मैंने अपनी रोनी सूरत बना ली। दुखी स्वर में अभिनय करते हुए कहा—'ब्राह्मण देवता, मैंने

संकल्प किया था कि आप को धन दूं, परंतु मेरा धन चोरी हो गया। मैं स्वयं कंगाल हो गया हूं। अब मैं आपको कहां से धन लाकर दूं ? मैं शर्मिंदा हूं। मैं आप की धन द्वारा सहायता नहीं कर सकता।'

''ब्राह्मण निराश होकर लौट गया। मैं मन ही मन प्रसन्न हो गया। मृत्यु होने पर जब यमराज के दरबार में लाया गया, तो मुझे सियार के रूप में जन्म देने का आदेश दिया गया। जो दुष्ट व्यक्ति किसी को कोई वस्तु देने का वचन देकर, लोभवश वह वस्तु नहीं देता, वह सियार बनता है।''

अपनी पिछले जन्म की कथा सुनाकर सियार चुप हो गया। थोड़ी देर बाद बोला—''हे वानर, मैंने अपनी कथा सुना दी। अब आप भी हमें बताइए कि आप बंदर क्यों बने ?''

सियार का प्रश्न सुनकर वानर सहम गया। उसने यह नहीं सोचा था कि उससे भी ऐसा ही प्रश्न किया जाएगा। वानर वैसे मन ही मन लज्जित हो रहा था, परंतु इस समय अपनी कहानी सुनाए बिना उसका छुटकारा नहीं हो सकता था। वानर ने अपने पिछले जन्म की कहानी सुनानी शुरू की—

''क्या बताऊं, मैं भी तुम्हारी तरह एक ब्राह्मण कुल में पैदा हुआ था। मेरे पिता का नाम विश्वनाथ था। वह वेद-शास्त्रों के महान विद्वान थे। मेरी माता सरल महिला थीं। उसका नाम कमलालया था। वह कमल जैसी निर्मल और सुंदर थीं। सियार, तुम्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि पूर्व जन्म में भी हमारी मित्रता थी। तुम्हें इस सत्य का ज्ञान नहीं है, परंतु एक पुण्य के कारण मुझे इस सच्चाई का भी स्मरण है। इसी मित्रता के कारण हम दोनों मिल रहे हैं। अब मैं वह पाप बताता हूं जिससे मुझे वानर की योनि में जन्म लेना पड़ा।

''श्री विश्वनाथ और श्रीमती कमलालया का पुत्र मैं वेदनाथ के नाम से प्रसिद्ध हुआ। मुझे साग खाने का बहुत शौक था। एक बार एक ब्राह्मण ने बड़े मन से साग बनाया। मेरा मन ललचा गया। मांगने में मुझे लज्जा आ रही थी, इसलिए मैंने उसका सारा साग चुरा लिया। मेरे साग चुरा लेने से उसके मन को बहुत कष्ट हुआ, परंतु मैंने बहुत स्वाद से सारा साग खा लिया। जब मेरी मृत्यु हुई, तो मुझे यमराज के सामने उपस्थित किया गया। मेरा अपराध बताया गया। चित्रगुप्त ने मेरे इस पाप को अत्यंत निंदनीय बताते हुए मुझे वानर बन जाने का दंड दिया।''

कुछ सोचकर सियार ने कहा—''वानर भाई, हम दोनों को इस पाप से छुड़ाने वाला कौन होगा ?''

वे बात चीत कर ही रहे थे कि तभी वहां से एक महान तपस्वी निकले। यह सिंधुद्वीप नामक महामुनि थे। सियार और बंदर ने उन्हें पहचान लिया। उन दोनों ने मुनिवर को प्रणाम किया। अवसर देखकर सियार और बंदर एक स्वर में बोले—''हे भगवान, आप अपनी कृपा दृष्टि से हमें इस पाप योनि से मुक्त होने का उपाय सुझाएं। हमें क्षमा कीजिए। हमें मनुष्य बनाने की कृपा कीजिए।''

महामुनि ने सियार और वानर को सामने बैठा लिया। आंखें बंद करके बोले—''मैं तुम दोनों से प्रसन्न हूं। तुम दोनों अपने इस रूप से मुक्त होना चाहते हो ? इस पाप से छूटने के लिए तुम्हें एक तीर्थ में स्नान करना होगा।''

सियार और बंदर बहुत ध्यान से सुन रहे थे। उन्होंने मुनि से पूछा—''महामुनि, वह तीर्थ कौन-सा है, और कहां है ? हम उसमें अवश्य स्नान करेंगे।''

महामुनि बोले—''तुम दोनों दक्षिण समुद्र के तट पर श्री रामचंद्र के धनुष्कोटि तीर्थ में जाकर स्नान करो। तुम्हारे पाप शांत हो जाएंगे। शीघ्र चले जाओ। श्रीराम तुम पर कृपा करेंगे।''

सियार और बंदर ने सिंधुद्वीप महामुनि को हाथ जोड़कर, सिर झुकाकर प्रणाम किया। और उनसे अपने लक्ष्य की ओर बढ़ने की आज्ञा मांगी। अनुमति लेकर दोनों धनुष्कोटि तीर्थ की ओर चल दिए। अनेक प्रकार के कष्ट सहते-सहते, दक्षिण समुद्र के तट पर पहुंचे। अत्यंत श्रद्धा के साथ उन्होंने स्नान किया। उन्हें फिर मानव शरीर प्राप्त हुआ।

(स्कंद पुराण)

आप कितने बुद्धिमान हैं ?

यहां दो चित्र बने हुए हैं। ऊपर पहले बनाया हुआ मूल चित्र है। नीचे इसी चित्र की नकल है। नीचे का चित्र बनाते समय चित्रकार का दिमाग कहीं खो गया। उसने कुछ गलतियां कर दीं। आप सावधानी से दोनों चित्र देखिए। क्या आप बता सकते हैं कि नीचे के चित्र में कितनी गलतियां हैं ? इसमें दस गलतियां हैं। सारी गलतियों का पता लगाने के बाद आप स्वयं इस बात का फैसला कर सकते हैं कि आपकी बुद्धि कितनी तेज है। १० गलतियां ढूंढ़ने वाला **जीनियस**; ६ से ९ तक गलतियां ढूंढ़ने वाला **बुद्धिमान**; ४ से ५ तक गलतियां ढूंढ़ने वाला : **औसत बुद्धि**; ४ से कम गलतियां ढूंढ़ने वाला : **स्वयं सोच ले कि उसे क्या कहा जाए ?**

सही उत्तर इसी अंक में किसी जगह दिए जा रहे हैं। आप सावधानी से प्रत्येक पृष्ठ देखिए और उत्तर खोजिए। आपकी बुद्धि की परख के लिए निर्धारित समय—१५ मिनट।
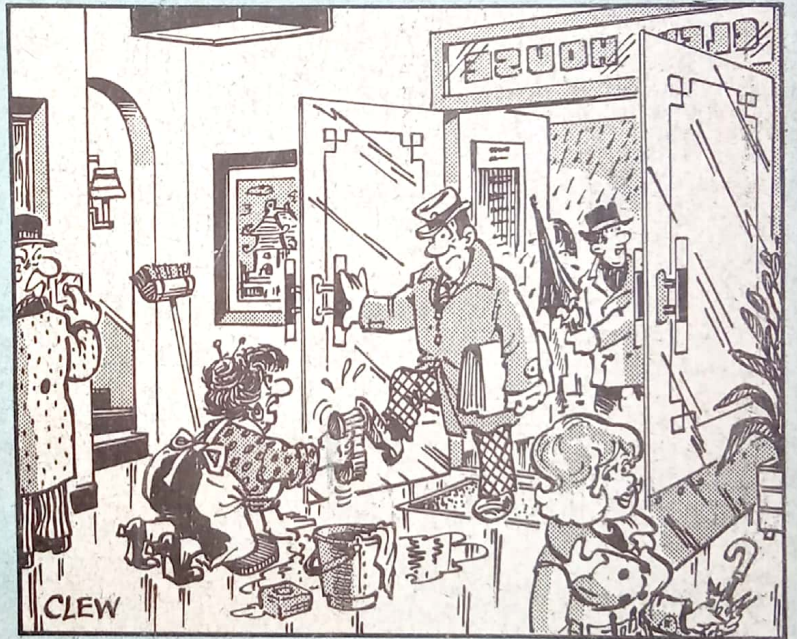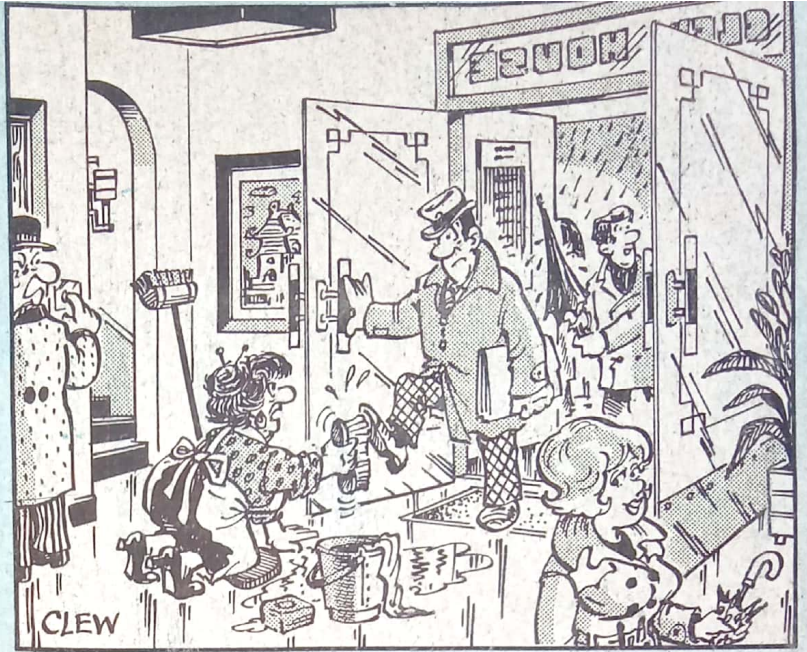
कहानी लिखो-१२६

सामने छपे चित्र के आधार पर एक कहानी लिखिए। उसे १५ **मईतक कहानी लिखो-१२६, नंदन, हिन्दुस्तान टाइम्स हाउस, १८-२० कस्तूरबा गांधी मार्ग, नई दिल्ली-११०००१** के पते पर भेज दीजिए। चुनी गई कहानियां प्रकाशित की जाएंगी। पुरस्कार भी मिलेगा।

परिणाम : जुलाई ९४ अंक

चित्र पहेली-१२६

भैया दूज : इस विषय पर चटख रंगों से एक चित्र बनाइए। चित्र के पीछे अपना **नाम, आयु और पता** साफ-साफ लिखिए। चित्र **१५ मई, १९९४** तक **नंदन कार्यालय** में भेज दीजिए। चुना गया चित्र प्रकाशित किया जाएगा। पुरस्कार भी मिलेगा।

परिणाम : अगस्त '९४ अंक
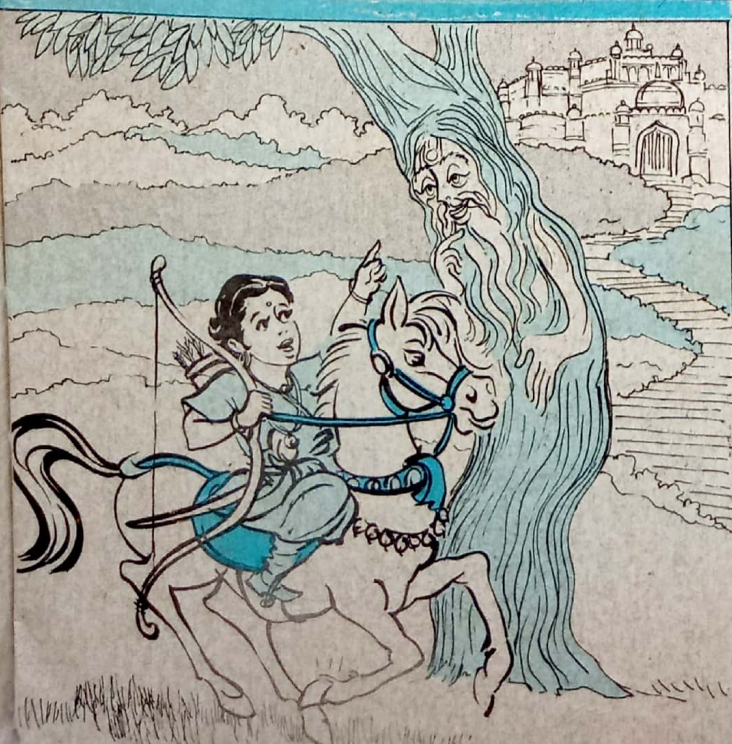
नागरूप

—प्रतिमा पांडेय

प्रतिष्ठितपुर के राजा का नाम था शूरसेन विश्रुत । उन्हें सभी सुख उपलब्ध थे,किंतु संतान न होने के कारण दुखी रहा करते थे । बहुत जप-तप, पूजा-पाठ करने के बाद राजा को पुत्र रत्न की प्राप्ति तो हुई,किंतु पुत्र का रूप सर्प का था ।. संतोष सिर्फ इसी बात का था कि वह सर्प होकर भी विलक्षण प्रतिभा वाला था और मनुष्य की तरह बातचीत कर सकता था । राजा ने अपने पुत्र के नागरूप की बात किसी को नहीं बतलाई । किन्तु उनका दुःख अब और बढ़ गया था । सोचा करते थे कि इस तरह के नागरूप पुत्र को प्राप्त करने से अच्छा तो यही था कि वह पुत्र हीन रहते ।

धीरे-धीरे समय बीतने लगा । नागरूप बड़ा होने लगा । उपनयन संस्कार की उम्र तक पहुंचा, तो उसने राजा से अनुरोध किया कि उसका संस्कार सम्पन्न करवाया जाय । नागरूप की बात सुनकर राजा अवाक् रह गए । फिर भी उन्होंने एक पुरोहित को बुलाकर गुप-चुप संस्कार करवा डाले । उसके बाद नागरूप ने वेदों का अध्ययन पूरा किया ।

समय बीतता गया । अचानक एक दिन, नागरूप ने पिता से अपना विवाह कराने की प्रार्थना की। सुन कर राजा विस्मित हो उठे ।

बोले—"तुम्हारी यह आकृति देख, कौन तुम्हें अपनी कन्या देगा ? तुम्ही बताओ, मैं तुम्हारा विवाह किससे कराऊं ?"

नागरूप ने उत्तर दिया—"पिता जी, राजाओं का विवाह कई तरह से होता है । अगर आपने मेरा विवाह नहीं कराया, तो मैं गंगा में डूबकर आत्महत्या कर लूंगा ।"

राजा पुत्र की बात सुनकर धर्मसंकट में पड़ गए। मंत्रियों को बुला कर सलाह मशविरा करने की सोची । भेद न खुले, इसीलिए मंत्रियों को बुला,राजा ने घुमाफिरा कर अपनी बात कही—"मेरा नागरूप पुत्र नागेश्वर है। सारे गुणों से सम्पन्न परमवीर है । मैं उस का विवाह करना चाहता हूं अतः आप लोग कोई योग्य कन्या बताएं ।"

मंत्री बोले—"राजन,सब जानते हैं कि युवराज हर तरह से योग्य हैं । भला ऐसे वर को कौन अपनी कन्या देना नहीं चाहेगा ?"

मंत्रियों की बात सुन,राजा फिर गम्भीर हो गए। उन्होंने अब स्पष्ट रूप से बात करना ठीक समझा। कहा—"मेरा पुत्र मनुष्य योनि में जन्म लेने के बावजूद नाग की आकृति वाला है । ऐसे को कौन अपनी कन्या देना चाहेगा ?"

राजा का एक मंत्री था, जो वृद्ध पर चतुर था। उसने राजा के धर्म संकट की बात समझ ली। बोला—"महाराज,पूर्व देश में विजय नाम का एक राजा है । उस राजा के पास अपार सम्पत्ति , असंख्य हाथी-घोड़े हैं । उसके आठ योग्य एवं परमवीर पुत्र हैं । उसकी सबसे छोटी पुत्री भोगवती है । शील एवं गुण में वह साक्षात लक्ष्मी है । वह हर तरह से आपके पुत्र के योग्य है ।"

"पर मेरे नाग रूपी पुत्र का विवाह उससे कैसे हो सकता है ? आप ही बताइए ।"–राजा ने पूछा ।

—"राजन, मैंने आपकी मुसीबत को जान लिया है । अब आप अपनी समस्या मुझ पर छोड़ दीजिए ।"

राजा को ढाढस दे,वृद्ध मंत्री राजसी ठाट-बाट और लश्कर के साथ राजा विजय के पास गया । अपनी चतुराई एवं कूटनीति का सहारा ले,प्रेम पूर्वक राजा से मिला । उसे बहुत सारे उपहार दिए । फिर कुछ झूठ, कुछ सच का सहारा ले,उनसे मीठी-मीठी बातें करने लगा । राजा विजय को पूरी तरह प्रभावित कर वृद्ध मंत्री ने राजा शूरसेन के पुत्र से भोगवती की शादी की बात चलाई । राजा विजय मंत्री की बातों में इस तरह आ गए कि उन्होंने उस शादी के लिए हां कर दी ।

मंत्री ने प्रतिष्ठितपुर पहुंच कर शूरसेन को यह खुश खबरी दी, तो शूरसेन और विचलित हो उठे। बोले—"फेरों के समय मेरे पुत्र को देख यदि गड़बड़ हो गई, तो..."

बात ठीक थी पर वृद्ध मंत्री ने हार नहीं मानी। वह एक योजना बना, पुनः राजा विजय के पास पहुंचा। उसे पहले से अधिक उपहार दिए। फिर बोला—"महाराज, शूरसेन के पुत्र नागरूप स्वयं यहां आना नहीं चाहते। आप तो जानते हैं, क्षत्रियों का विवाह अस्त्र-शस्त्र, वस्त्र एवं गहने से भी हो सकता है। क्यों न इस विधि से इस विवाह की रस्म सम्पन्न कर दी जाए?"

मंत्री के वाक्‌चातुर्य के कारण राजा विजय ने उसका यह प्रस्ताव भी स्वीकार कर लिया। भोगवती की शादी उसी विधि से करवा दी। प्रचुर दान-दहेज देकर मंत्री के साथ उसकी विदाई भी कर दी। मंत्री भोगवती के साथ लौट आया। भोगवती के साथ राजा विजय के मंत्रीगण भी आए थे। राजा शूरसेन ने उनके स्वागत-सत्कार में कोई कसर नहीं छोड़ी। मंत्रीगण गद्‌गद्‌ हो गए।

रूप और गुण दोनों से सम्पन्न भोगवती ससुराल में सुखपूर्वक रहने लगी। वह पूरे मन से सास-श्वसुर की सेवा करती, पर कभी भी अपने पति को न देख पाई।

देखती भी कैसे? उसका पति तो राजमहल के एक कक्ष में रत्न जटित पलंग पर फूलों की शीतल शय्या पर चुपचाप पड़ा रहता। विवाह के कुछ दिन बीत जाने पर अचानक एक दिन उसने माता-पिता से अपनी पत्नी को देखने की इच्छा प्रकट की।

शूरसेन फिर घबरा उठे। रानी से बोले—"अब तो यह रहस्य छिपाना उचित नहीं। भोगवती को बता ही दो कि उसका पति सामान्य मनुष्य नहीं, एक नाग है। जो होगा, देखा जाएगा।"

मौका देख, एक दिन रानी ने भोगवती को उसके पति का वास्तविक स्वरूप बता ही दिया। वह डर रही थी कि सचाई जान भोगवती उन पर धोखे से विवाह करने का आरोप लगाएगी, किन्तु ऐसा नहीं हुआ।

भोगवती शांत स्वर में बोली—"सामान्यतया पति के रूप में मनुष्य ही मिलता है। यह तो मेरा सौभाग्य है कि मुझे इस रूप में देवता मिले हैं।"

कहकर भोगवती फूलों की शय्या पर लेटे नागरूप के पास गई। हाथ जोड़ कर उसने अपने पति से निवेदन किया—"मुझे पति के रूप में आप देवता मिले हैं। मैं तो धन्य हो गई।" कह कर वहीं शय्या पर बैठ गई। स्वयं हाथों से अपने सर्प पति की सेवा-सुश्रूषा की, उसे मधुर गीत सुनाए। नागरूप बोला—"तुम एक राजकुमारी हो, मुझ जैसे सर्प को देख क्या तुम्हें डर नहीं लगा?"

भोगवती ने मुसकरा कर कहा—"यह मेरे भाग्य का लेख है। होनी को कौन टाल सकता है? स्त्रियों के लिए तो उनका पति ही सब कुछ होता है। फिर भय कैसा?"

नागरूप के चेहरे पर मुस्कान फैल गई—"मैं तुम्हारी भक्ति से खुश हूं। वास्तव में तुम्हारे कारण मेरी पूर्व जन्म की स्मृति लौट आई है। पिछले जन्म में मैं शेषनाग का पुत्र परम बलशाली नाग महेश्वर था। तुम मेरी पत्नी थी। मैं शिव की भुजाओं पर रहता था। एक बार भगवान शंकर पार्वती के साथ प्रसन्न मुद्रा में बैठे किसी बात पर जोर से हंस पड़े। इस पर मुझे भी हंसी आ गई। मेरी इस हरकत पर भगवान शंकर कुपित हो गए। मुझे शाप दे डाला कि मैं मनुष्य योनि में जन्म लेकर भी सर्प की आकृति का रहूंगा। उन्होंने यह भी कहा कि मेरे ज्ञान में कमी नहीं होगी। मुझे मिले इस शाप से तुम दुखी हो गई थी। भगवान की पूजा अर्चना कर उन्हें खुश किया था। तुम्हारी भक्ति से प्रसन्न हो, भगवान ने कहा था कि तुम्हारी कृपा से मुझे नाग की आकृति से मुक्ति मिलेगी। जब तुम मेरे साथ गंगा गौतमी में जाकर स्नान कर शिव की पूजा करोगी, तो मैं शाप से मुक्त हो जाऊंगा। अब समय आ गया है। तुम मेरे साथ गौतमी गंगा में स्नान कर भगवान शंकर का पूजन करो, ताकि मैं शाप मुक्त हो जाऊं।"

भोगवती ने वैसा ही किया। नागरूप को उस रूप से मुक्ति मिल गई।

(ब्रह्मपुराण)

टूटा दांत

—शिवकुमार गोयल

परशुराम भगवान शिव के पक्के भक्त थे। एक दिन वह शिव के दर्शन करने कैलाश पर्वत पहुंचे। पार्वती ने गणेश को आदेश दिया हुआ था कि समाधि और विश्राम के समय कोई भी शंकरजी के पास न आने पाए। गणेश ने द्वार पर परशुराम को देख, उन्हें प्रणाम किया और कहा— "अभी भगवान शंकर विश्राम कर रहे हैं। आप थोड़ी देर प्रतीक्षा करें। उसके बाद मैं आपको उनके दर्शन करा दूंगा।"

"भगवान शंकर मेरे गुरुदेव और आराध्य हैं। मुझे उनके पास जाने से कोई नहीं रोकता। फिर मुझे रोककर तुम मेरा अपमान क्यों कर रहे हो ?"— परशुराम क्रोध में कहते हुए आगे बढ़े। गणेश ने उन्हें रोका, लेकिन तब तक परशुराम गणेश को धकेल कर आगे बढ़े। देखते ही देखते उन दोनों में धक्का-मुक्की होने लगी। परशुराम ने गणेश को जमीन पर गिरा दिया।

गणेश उठ खड़े हुए। अब उन्होंने परशुराम को फिर एक बार रोका। लेकिन परशुराम ने अपना परशु उन पर तान दिया। गणेश अपना अपमान कब तक सहन करते ! उन्होंने परशुराम को अपनी सूंड़ में लपेटा और चारों ओर घुमाकर उन्हें समुद्र में फेंक दिया।

परशुराम समुद्र में तैरने लगे। गणेश ने परशुराम को फिर सूंड़ में लपेटा और बैकुंठ का चक्कर लगाया। बाद में गणेश ने उन्हें गोलोक में पटकनी दे दी।

परशुराम ने शिव स्त्रोत्र का स्मरण किया। फिर उन्होंने अपना परशु गणेश पर फेंका। गणेश ने परशु को अपने बाएं दांत से पकड़ लिया। परशु तो भगवान शिव का दिया हुआ था। उसका वार खाली कैसे जाता ! परशु से गणेश का बायां दांत टूटकर जमीन पर जा गिरा। भयानक आवाज से धरती कांप उठी।

शिवजी की निद्रा भंग हो गई। पार्वती भयंकर आवाज सुनकर गणेश के पास पहुंचीं। वह गणेश की हालत देख, घबरा गईं। वह गणेश को गोदी में लेकर शिवजी के पास गईं। उन्होंने पति से कहा— "देव, आपके शिष्य परशुराम ने परशु के प्रहार से गणेश को लहूलुहान कर दिया है। इसका एक दांत भी टूट गया है।"

बातें हो ही रही थीं कि परशुराम तब तक भगवान शंकर के पास पहुंचकर उनके चरण दबाने लगे।

पार्वती ने परशुराम से कहा— "आज तुम अपने गुरुपुत्र गणेश पर ही वार कर बैठे। यह तुम्हारा अपराध है।"

परशुराम कुछ न बोले। इस पर पार्वती को क्रोध आ गया। परशुराम ने अपने गुरु शिवजी को देखा। गणेश ने भी भगवान श्रीकृष्ण का स्मरण किया। तभी चमत्कार हुआ। सबने देखा— भगवान श्रीकृष्ण बालक के रूप में सामने खड़े हैं। सबने उन्हें प्रणाम किया।

यह दृश्य देख, परशुराम समझ गए कि गणेश भी किसी से कम बलशाली नहीं हैं। श्रीकृष्ण ने परशुराम से कहा— "इस संसार में शंकरजी से बढ़कर और कोई देवता नहीं है। पार्वतीजी महान पतिव्रता नारी हैं। गणेश जी विघ्न-बाधाओं को दूर करते हैं। इसीलिए धार्मिक अनुष्ठानों में गणेश जी की सबसे पहले पूजा की जाती है।"

यह सुन, परशुराम का घमंड चूर-चूर हो गया। वह पार्वती के चरणों में लेट गए और क्षमा मांगने लगे। पार्वती ने स्नेह भरा हाथ उनके सिर पर रख दिया। वह बोलीं— "तुम भी मेरे बेटे हो। गणेश तुम्हारा भाई है।" यह सुन, श्रीकृष्ण अंतर्धान हो गए।

(शिवपुराण)

अनमोल मणि

—महंत नारायण गिरि

उज्जयिनी के राजा चंद्रसेन भगवान महाकाल के अनन्य भक्त थे। शिवजी के पार्षद मणिभद्र प्रायः महाकाल के दरबार में आया करते थे। राजा चंद्रसेन की भक्ति, सेवा और उपासना देखकर वे भी उनके मित्र बन गए थे।

एक दिन मणिभद्र ने प्रसन्न होकर राजा चंद्रसेन को एक दिव्य चिंतामणि प्रदान की, जो सोचने से मनचाही वस्तु प्रदान कर देती थी। अब राजा जिस वस्तु की कामना करते, वह वस्तु देखते ही देखते उनके सामने रखी होती थी। चिंतामणि को कंठ में धारण करके जब राजा सिंहासन पर बैठते, तो उनकी शोभा बढ़ जाती थी। चिंतामणि के कारण राजा चंद्रसेन का महत्व भी बढ़ गया था। अतः कुछ राजा उनसे द्वेष करने लगे थे। उन्होंने उज्जयिनी पर हमला कर चिंतामणि को कब्जे में करने की योजना बनाई।

राजा चंद्रसेन को अपने राज्य पर आक्रमण का समाचार मिला। वह भगवान महाकाल की शरण में गए। भगवान महाकाल ने उनसे कहा—"राजन, तुम उज्जयिनी के राज्य का रक्षक मुझे मानते हो। स्वयं मंत्री की तरह राज-काज देखते हो। अतः तुम राज्य की चिंता मत करो। तुम पूजा-उपासना में लगे रहो। जैसा होगा होने दो।" यह सुन, राजा चंद्रसेन निश्चिंत होकर पहले की तरह उपासना करने लगे।

उन दिनों उज्जयिनी में एक विधवा ग्वालिन रहती थी। उसका पांच वर्ष का एक पुत्र था। वह भगवान महाकाल का परम भक्त था। मौका पाकर एक दिन उज्जयिनी पर आक्रमण करने वाले राजाओं की सेना ने उज्जयिनी को चारों ओर से घेर लिया। शत्रु राजा एक दिन एक गांव में पहुंचे। उन्होंने उस ग्वाल बालक को भगवान महाकाल की पूजा करते देखा। सहसा उस ग्वालिन का घर मणियों से जगमगा उठा। पूरा घर सोने के भव्य मंदिर में बदल गया। वे इस दृश्य को देखकर भौचक्के रह गए।

इसी बीच महाकाल स्वयं प्रकट हो गए। उनके साथ उमा भी थीं। उमा ने पूछा—"कैलाशपति, इस बालक पर आपकी इतनी कृपा क्यों है?"

महाकाल बोले—"जिस राज्य का राजा चंद्रसेन जैसा भक्त और उदार हो, उस राज्य का हर बालक थोड़ी सी उपासना करके भी मेरी कृपा का अधिकारी बन जाता है। यह सब राजा चंद्रसेन के पुण्यों का फल है।"

उज्जयिनी पर आक्रमण करने आए वे शत्रु राजा, चंद्रसेन की परम भक्ति के रहस्य को जान गए। उनके मन का द्वेष नष्ट हो गया। सभी राजा उस गोप बालक के चरणों में नतमस्तक हो गए।

राजा चंद्रसेन भी यह खबर पाकर भक्त गोप के दर्शन करने वहां पहुंचे। उस समय महाकाल गोप बालक को वरदान दे रहे थे—तुम्हारी आठवीं पीढ़ी में महायशस्वी नंद उत्पन्न होंगे। उनके घर में भगवान नारायण श्रीकृष्ण के रूप में जन्म लेंगे। अपनी अद्‌भुत लीलाएं दिखाएंगे। तुम संसार में भक्तराज 'श्रीकर' के नाम से जाने जाओगे। राजा चंद्रसेन ने यह सुना, तो उन्होंने महाकाल को मन में प्रणाम किया। महाकाल उन्हें देखकर मुसकराए। शत्रु राजा चंद्रसेन का जय-जयकार करने लगे। थोड़ी देर में ही महाकाल अंतर्धान हो गए। **(स्कंदपुराण)**

घी पिओ

—मनजीत कौर भाटिया

एक बार अग्निदेव ब्राह्मण का वेश धरकर अर्जुन और भगवान श्रीकृष्ण के पास गए। अर्जुन और भगवान श्रीकृष्ण ने तुरंत ही आसन से खड़े हो, उनको प्रणाम किया। पूछा—"बताइए, हम आपकी क्या सेवा कर सकते हैं ?"

ब्राह्मण ने बताया—"मैं बहुत दिन से भूखा हूं। मैं सदा अपरिमित अन्न का भोजन करता हूं। आज मैं आप दोनों से भिक्षा मांगता हूं। एक बार पूर्ण भोजन कराकर मुझे तृप्ति प्रदान कीजिए।"

श्रीकृष्ण और अर्जुन बोले—"बताइए, आप किस अन्न से तृप्त होंगे ? हम दोनों आपके लिए उसी का प्रबंध करेंगे।"

अग्निदेव ने उनकी ओर देखकर कहा—"वीरो ! मुझे अन्न की भूख नहीं है, मैं अग्नि हूं। जो अन्न मेरे अनुरूप हो, वही आप दोनों मुझे दें ? मैं इस खांडव वन को जलाना चाहता हूं लेकिन इंद्र सदा इस खांडव वन की रक्षा करते हैं। उनके संरक्षण में होने के कारण मैं इसे जला नहीं पाता हूं।

"इस वन में इंद्र का मित्र तक्षक नाग अपने परिवार सहित रहता है। वज्रधारी इंद्र सदा उसकी रक्षा करते हैं। इंद्र के प्रभाव से मैं इस वन को जला नहीं पाता। मुझे प्रज्वलित देखकर, वह वर्षा करने लगते हैं। उस जल से मेरी प्रचंड अग्नि भी शांत हो जाती है।

"आप दोनों अस्त्रविद्या के ज्ञानी हैं। खांडव वन को जलाने के लिए मुझे आपकी सहायता चाहिए। मैं इसी अन्न की भिक्षा मांगता हूं।" —कहकर अग्निदेव ने श्रीकृष्ण व अर्जुन को अपनी योजना समझाई—"जब मैं इस वन को जलाने लगूं, आप लोग ऊपर से बरसती हुई जल की धाराओं तथा इस वन से निकलकर भागने वाले प्राणियों को रोकिएगा।"

उत्सुकता वश अर्जुन ने पूछा—"लेकिन आप देवराज इंद्र द्वारा संरक्षित और अनेक प्रकार के जीव-जंतुओं से भरे हुए खांडव वन को किस लिए जलाना चाहते हैं ?"
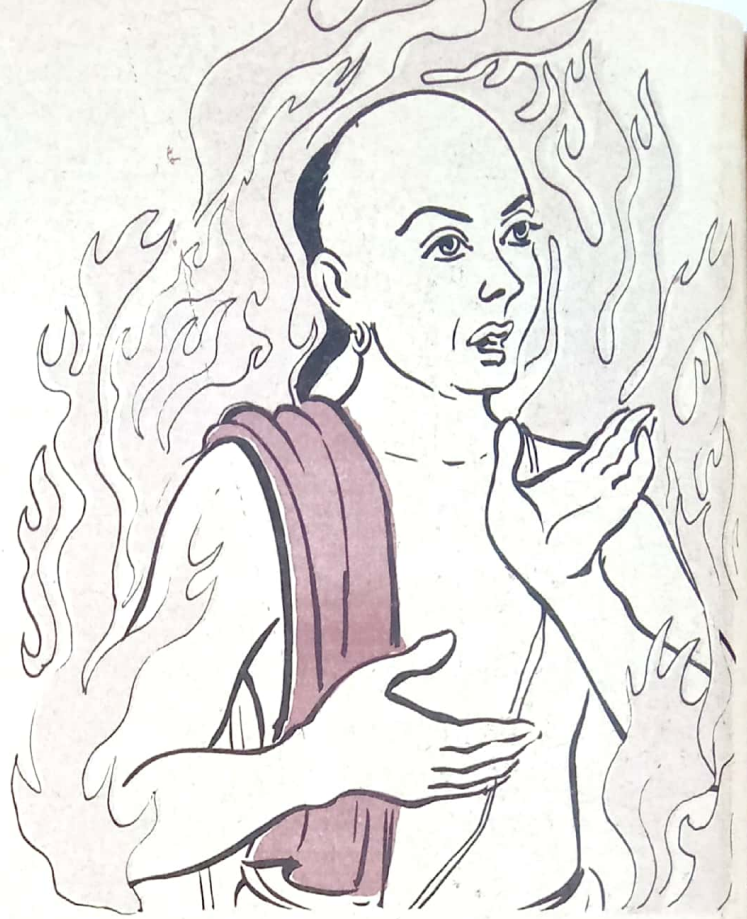
अग्निदेव ने कहा—"सुनना ही चाहते हो तो सुनो—

प्राचीन काल में श्वेतकि नाम के एक राजा इंद्र के समान बली तथा पराक्रमी थे। उस समय उनके जैसा यज्ञ करने वाला, दाता और बुद्धिमान दूसरा कोई नहीं था। उन्होंने अनेक बड़े-बड़े यज्ञों का अनुष्ठान किया था।

उनके मन में यज्ञ और दान के सिवा दूसरा कोई विचार ही नहीं आता था। वह यज्ञ कर्मों में और दान करने में ही व्यस्त रहते थे।

यज्ञ वह ऋत्विजों के साथ किया करते थे। यज्ञ करते-करते उनके ऋत्विजों की आंखें धुएं से लाल हो उठीं। दीर्घकाल तक आहुति देते-देते वे सभी खिन्न हो गए थे। इसलिए राजा को छोड़कर चले गए। राजा ने कई प्रलोभन देकर, उन ऋत्विजों को वापस बुलाने की चेष्टा की, लेकिन वे वापस न आए। तब राजा ने दूसरे ब्राह्मणों को ऋत्विज बनाया और उन्हीं के साथ

अपने चालू किए हुए यज्ञ को पूरा किया।

राजा के मन में विचार उठा कि मैं सौ वर्षों तक चलने वाला एक यज्ञ प्रारम्भ करूं। तुरंत उनको वह यज्ञ आरम्भ करने के लिए ऋत्विज नहीं मिले।

राजा ने ऋत्विजों को मनाने का बहुत प्रयत्न किया। परंतु वे किसी भी तरह राजी नहीं हुए।

कुपित होकर राजा ने आश्रमवासी महर्षियों से कहा—"यदि मैं पापी हूं, ऋषियों का आदर न करता होऊं, तो आप लोग मेरी सहायता न करें। अन्यथा आपको यज्ञ में बाधा नहीं डालनी चाहिए। मैं आपकी शरण में हूं। आप लोग मुझ पर कृपा करें।"

फिर कुछ रुककर बोले—"यदि आप लोग मेरी मदद नहीं करेंगे, तो मैं यज्ञ कराने के लिए दूसरे ऋषियों के पास जाऊंगा।" इतना कहकर राजा चुप हो गए।

ऋत्विज बोले—"राजन, आपके यज्ञकर्म तो निरंतर चलते रहते हैं। हमेशा इसमें लगे रहने के कारण हमलोग बेहद थक गए हैं। हमारी सलाह है कि आप भगवान रुद्र के पास जाइए। अब वही आपका यज्ञ कराएंगे।"

ऋषियों के ये वचन सुनकर, राजा श्वेतकि को बड़ा क्रोध आया। वह कैलाश पर्वत पर जाकर तपस्या में लीन हो गए।

उनको इस प्रकार घोर तपस्या में लीन देख, भगवान शंकर ने अत्यंत प्रसन्न होकर उन्हें दर्शन दिए। स्नेहपूर्वक भगवान ने उनसे कहा—"मैं तुम्हारी तपस्या से बहुत प्रसन्न हूं। तुम जैसा चाहते हो, वैसा वर मांग लो।"

रुद्र के ये वचन सुनकर, श्वेतकि ने शिव के चरणों में प्रणाम किया। कहा—"यदि मेरे ऊपर आप प्रसन्न हैं, तो स्वयं चलकर मेरा यज्ञ कराएं।" राजा की कही हुई बात सुनकर, भगवान शिव प्रसन्न होकर बोले—"राजन! यज्ञ कराना हमारा काम नहीं है, परंतु तुमने यही वर मांगने के लिए भारी तपस्या की है, अतः मैं एक शर्त पर तुम्हारा यज्ञ करवाऊंगा। यदि तुम बारह वर्षों तक घृत की निरंतर धारा द्वारा अग्निदेव को तृप्त करो, तो मुझसे जिस कामना के लिए प्रार्थना कर रहे हो, वह पूरी होगी।"

रुद्र के ऐसा कहने पर राजा श्वेतकि ने उनकी आज्ञा के अनुसार सारा कार्य पूरा किया। बारहवां वर्ष पूर्ण होने पर भगवान महेश्वर पुनः आए।

प्रसन्न होकर बोले—"तुमने मुझे पूर्ण संतुष्ट किया है, परंतु शास्त्र विधि के अनुसार यज्ञ कराने का अधिकार ब्राह्मणों को ही है। मैं स्वयं तुम्हारा यज्ञ नहीं कराऊंगा। पृथ्वी पर मेरे ही अंश महातेजस्वी दुर्वासा, मेरी आज्ञा से तुम्हारा यज्ञ कराएंगे। तुम सामग्री जुटाओ।"

भगवान रुद्र के वचन सुनकर, राजा पुनः अपने नगर में आए और यज्ञ सामग्री जुटाने लगे। सामग्री जुटाकर वह रुद्र के पास गए। बोले—"महादेव! आपकी कृपा से मैंने यज्ञ की सभी आवश्यक सामग्री एकत्र कर ली है।" भगवान रुद्र ने दुर्वासा को बुलाया और यज्ञ सम्पन्न कराने के लिए कहा।

विधिपूर्वक उन महात्मा नरेश का यज्ञ आरम्भ हुआ। उस यज्ञ में बहुत-सी दक्षिणा दी गई।

उनका यज्ञ पूरा होने पर उसमें जो महातेजस्वी

सदस्य और ऋत्विज दीक्षित हुए थे, वे सब दुर्वासा जी की आज्ञा ले, अपने-अपने स्थान को चले गए।

राजा श्वेतकि के यज्ञ में मैंने लगातार बारह वर्षों तक घृतपान किया था। इसी से मुझे अपच हो गया। मेरी कांति मंद हो गई।

मैं ब्रह्माजी के पुण्यधाम में गया। ब्रह्माजी से मैंने कहा—"राजा श्वेतकि ने अपने यज्ञ में मुझे परम संतुष्ट कर दिया। परंतु मुझे अत्यंत अरुचि हो गई है, जिसे मैं किसी प्रकार दूर नहीं कर पा रहा हूं। उसी के कारण मैं तेज और बल से हीन होता जा रहा हूं। अतः मैं चाहता हूं कि आपकी कृपा से मैं स्वस्थ हो जाऊं।"

मेरी यह बात सुनकर, ब्रह्माजी हंसते हुए बोले—"तुमने बारह वर्षों तक आहुति के रूप में घृत धारा का उपभोग किया है। इसीलिए तुम्हें ग्लानि हो रही है। तेज से हीन होने के कारण तुम्हें अपने मन में कुंठा नहीं पालनी चाहिए। तुम फिर स्वस्थ हो जाओगे। मैं शीघ्र ही तुम्हारी अरुचि नष्ट कर दूंगा।

"पूर्वकाल में देवताओं के आदेश से तुमने दैत्यों के निवास-स्थान खांडव वन को जलाया था, उसी को जला डालो। उस वन को जलाने के लिए तुम शीघ्र जाओ। तभी इस ग्लानि से छुटकारा पा सकोगे।"

यह बात सुनकर मैं बड़े वेग से खांडव वन में पहुंचा। बल का आश्रय ले, वायु का सहारा पाकर कुपित हो, सहसा प्रज्वलित हो उठा।

खांडव वन को जलते देख, वहां रहने वाले प्राणियों ने उस आग को बुझाने के लिए बड़ा यत्न किया। हजारों की संख्या में हाथी अपनी सूंडों में जल लेकर शीघ्रता पूर्वक दौड़े आते और आग पर उस जल को उंडेल देते।

इसी प्रकार दूसरे जानवरों ने भी अनेक प्रकार से आग बुझाने की कोशिश की, और मेरी उठती हुई लपटों को शांत कर दिया।

इस तरह मैंने बार-बार प्रज्वलित होकर सात बार खांडव वन को जलाने का असफल प्रयास किया। हर बार अपनी असफलता पर मुझे बड़ी निराशा हुई। मैं फिर से पितामह ब्रह्माजी के पास गया। उन्होंने ही मुझसे कहा कि आप लोगों के सहयोग से ही इंद्र के देखते ही देखते मैं खांडव वन को जला सकता हूं।"

अग्निदेव की याचना सुनकर, भगवान श्रीकृष्ण व अर्जुन उनकी सहायता के लिए तैयार हो गए।

उन्होंने अग्निदेव को सारी योजना समझाई। उन्हें दिव्य धनुष, रथ आदि साधन जुटाने के लिए कहा। अग्निदेव ने अर्जुन और श्रीकृष्ण को दिव्य धनुष, अक्षय तरकस, दिव्य रथ और चक्र आदि लाकर दिए। फिर उन्होंने अग्निदेव से खांडव वन जलाने को कहा। देखते ही देखते खांडव वन में चारों ओर आग फैल गई। इंद्र ने जल बरसाकर खांडव वन की रक्षा करने की असफल चेष्टा की। परंतु अग्निदेव के तेज से जल धाराएं वहां पहुंचने से पहले आकाश में सूख जातीं। सभी देवताओं ने इंद्र के साथ मिलकर, श्रीकृष्ण अर्जुन का डटकर मुकाबला किया। लेकिन जब वे सफल न हो सके, तो भय के मारे युद्ध छोड़कर, इंद्र की शरण में चले गए। इस तरह देवताओं की पराजय हुई। अग्निदेव कृष्ण व अर्जुन के सहयोग से खांडव वन को जलाने में सफल हुए।

(महाभारत)

जन जसवंत

नासिक नरेश प्रताप शाह के पुरोहित थे जनार्दन पंत। जनार्दन के बेटे थे जन जसवंत। पिता से एकदम विपरीत...
बेटे, कुछ पूजा-पाठ...भक्ति...पुरोहिताई सीख लो...
न...अच्छा नहीं लगता। बस घर में ही रहने दो...

राजमाता चंद्रावती ने उन्हें न जाने कैसे समझाया, वह एकदम बदल गए। साधु-संतों की सेवा में लग गए। एक दिन...
गणपति धुरें में दो सिद्ध योगी आए हैं। दर्शन करते ही...
मैं भी जाऊंगा। भोजन बना दो। रोज लेकर जाऊंगा...

जन जसवंत नियम से रोज भोजन ले योगियों के पास जाने लगे। एक दिन राह में...
भूख लगी है। यह भोजन हमें दे दो न...
न...योगी बाबाओं का है। पेड़ के नीचे ठहरो। दोबारा लाकर दूंगा...
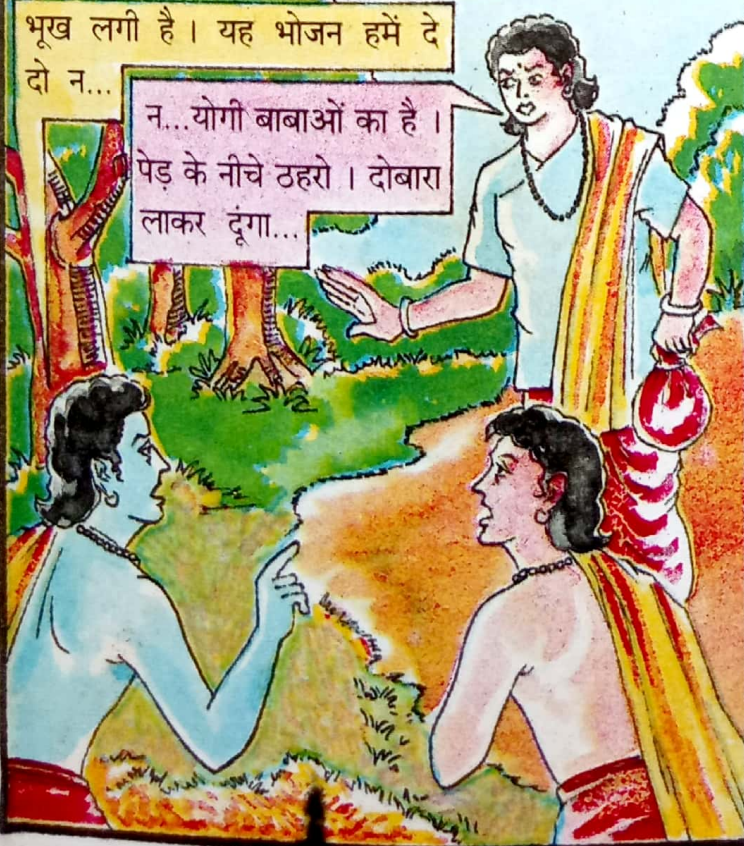
योगी वह स्थान छोड़कर जा चुके थे। जन जसवंत वापस पेड़ के पास आए...
अरे, कहां गए ? ढूढ़ता हूं..भूखे थे।...अरे, यह क्या ? सूखी घास हरी...कौन हैं वे दोनों...देवता...

उनको वे बालक अलौकिक लगे। शाम तक उन्हें खोजते रहे। थक गए, तो वहीं सो गए। नींद में सपना देखा...
मैं ही था...लक्ष्मण के साथ। पंचवटी जाओ...फिर मिलेंगे...
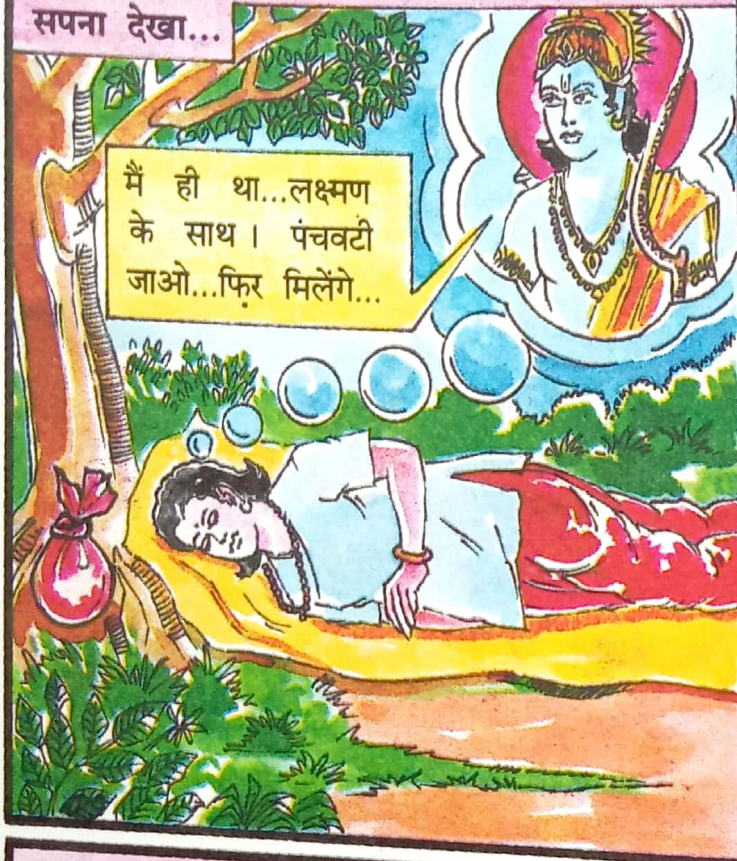
वह पंचवटी गए। वर्षों वहां साधना की। एक रात सपने में भगवान राम ने उन्हें काशी जाने को कहा। वह घर आए...
मुझे श्रीराम का आदेश...काशी जाकर संत तुलसीदास की सेवा करूं...
हम भी चलेंगे...
हम भी... आपके साथ...

जन जसवंत भक्तों के साथ रामधुन गाते काशी चल पड़े। सतपुड़ा के सेंधवा घाट पर पहुंचे ही थे कि डाकुओं ने...
खबरदार, जो हिले...
सब कुछ हमें सौंप दो...
अब श्रीराम ही बचाएंगे...रामधुन बंद क्यों कर दी...

रामधुन दोबारा शुरू हुई ही थी कि...
मेरे राम... तेरे राम... सबके राम...

कुछ ही देर बाद...
क्षमा...घुड़सवारों को रोकिए...आज से लूटमार बंद...संत सेवा...बस...
मेरे राम... सबके राम...
मुझमें राम... सब में राम...

संत तुलसीदास को भी भगवान ने जन जसवंत के बारे में बता दिया था...
आओ! भक्त प्रवर...आपकी प्रतीक्षा थी...
मैं तो आपके चरणों की धूल हूं...

वर्षों तक वह संत तुलसीदास के सान्निध्य में राम-भक्ति का प्रचार करते रहे। फिर अपने गांव मल्हेर की ओर चल दिए। मार्ग में...
आपके दर्शन करके धन्य हुआ। कहां जा रहे हैं ?
पहले द्वारका फिर डाकोर !
कान्हा के दर्शन...

जन जसवंत उनके साथ द्वारका गए। वहां से डाकोर की ओर चल दिए। रास्ते में जिस बंजर इलाके से गुजरे, वहां अकाल पड़ा था...
यह कुआं भी सूखा... आह पानी !
पानी !
हे राम...अब तेरा ही सहारा...
पानी !!

राम नाम ले, उन्होंने एक पत्थर कुएं में डाला, तो वह पानी से भर गया। दूर-दूर तक चर्चा फैल गई। वहां के राजा ने भी...
श्रीराम का महान भक्त है। वाणी में अमृत, हाथों में जादू...
उसे बुलाओ... हमारा गुणगान करे। मुंह मांगा धन...

किंतु जन जसवंत ने इंकार कर दिया। क्रोधित हो राजा ने उन्हें गहरे तालाब में फिंकवा दिया। अगले ही पल...
हरे राम, हरे राम। मेरे राम, सबके राम...
?
यह क्या? ...चमत्कार...अरे...
?
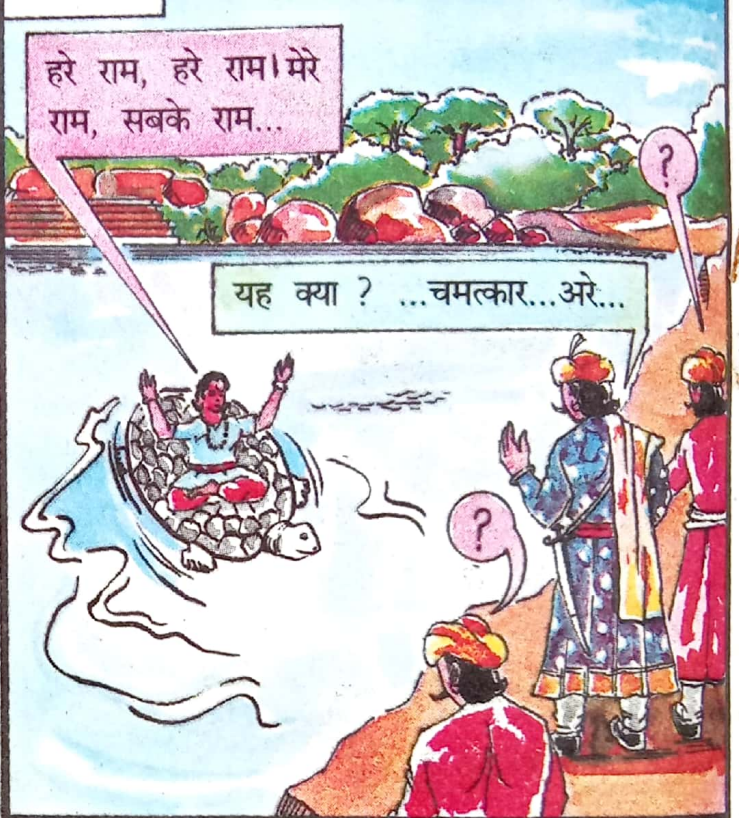
उनका आश्रम तापी नदी के किनारे बोरठे के पास था। एक दिन तापी में बाढ़ आ गई। त्राहि-त्राहि मच गई...
बचाओ, हमें बचाओ...
बचाओ महाराज!
प्रभु, मेरी लाज रखना...संत तुलसीदास की दी यह प्रतिमा...शायद...संकटमोचन...

बाढ़ उतरने लगी। पानी प्रतिमा से आगे नहीं बढ़ा। राजा-रंक सब उनके अनुयायी बन गए
राम भजो। सबमें राम देखो। रामधुन सुनो।
बोरठे में तापी नदी की एक शिला पर उनकी पादुकाएं स्थापित हैं।

किसी राजा को विक्रमादित्य बनने की सूझी । वह अपने गुरु जी के पास गया...

महल में आ राजा ने मंत्री और कोषाध्यक्ष से कहा— 'गरीबों को हर माह पांच सौ मुहरें...उनकी झोंपड़ियों की जगह पक्के घर...

एक बुढ़िया ने राजा को सहारा दिया। घाव धोकर पट्टी बांधी।
काश, मेरे पास कुछ बचा होता। तुम्हें कुछ दे पाता..
ज्यादा विक्रमादित्य न बन..आराम कर..सवेरे जाइयो..
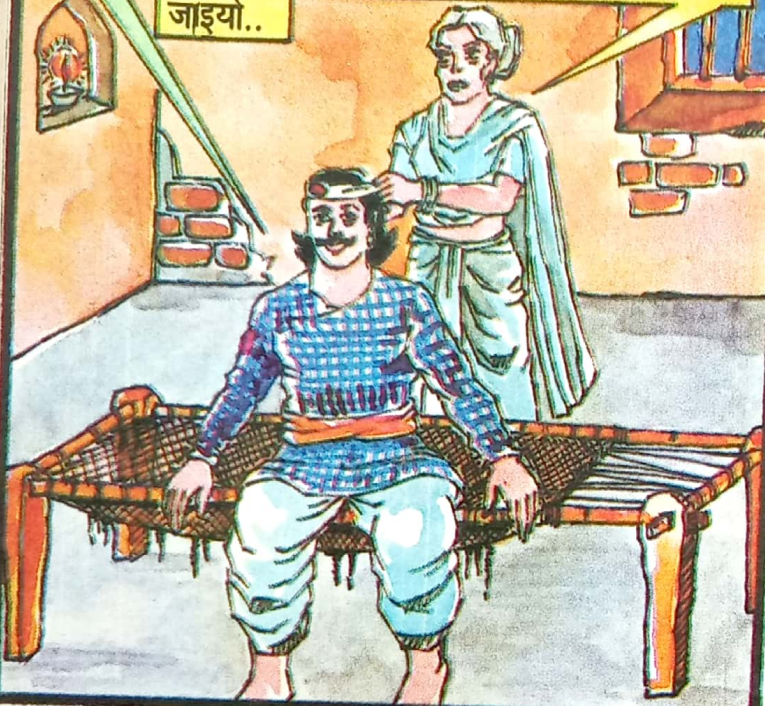
मुंह अंधेरे राजा जाने लगा तो अपनी पगड़ी से एक टुकड़ा फाड़ा। उस पर कोयले से निशान लगाकर...
यह रखो। कल महल में आना। द्वारपाल को यह दिखाकर कहना—राजा से मिलना है। बस..
कपड़े का टुकड़ा..ऊंह..महल..राजा..शायद दिमाग पर चोट का असर..
?
?

राजा चला गया तो वे दोनों बुढ़िया के पास आए। जानना चाहते थे कि मुसाफिर उसे क्या दे गया है।
दे गया यह। कह गया राजमहल में आना..राजा से मिलना..पागल..
वह पागल..शायद नहीं, कोई बड़ा आदमी..
जरूर कोई रहस्य है।

वे थे कालू और उसकी चालाक बीवी जतिया। बुढ़िया की बात सुन दोनों लौटे तो...
बुढ़िया की किस्मत खुलने वाली है। काश, उस घायल को हम ही..
आजमा लेते हैं। बुढ़िया लकड़ी बीनने जाए, तो टुकड़ा चुरा लाना। मैं कल नए कपड़े पहनकर महल में..

ऐसा ही हुआ। कालू वह टुकड़ा चुरा लाया। जतिया धोबी से रेशमी कपड़े ले आई। अगले दिन सवेरे...
इन कपड़ों में रानी लग रही हो। महल में रोक-टोक नहीं होगी..
तुम लौट जाओ। मैं अकेली ही...
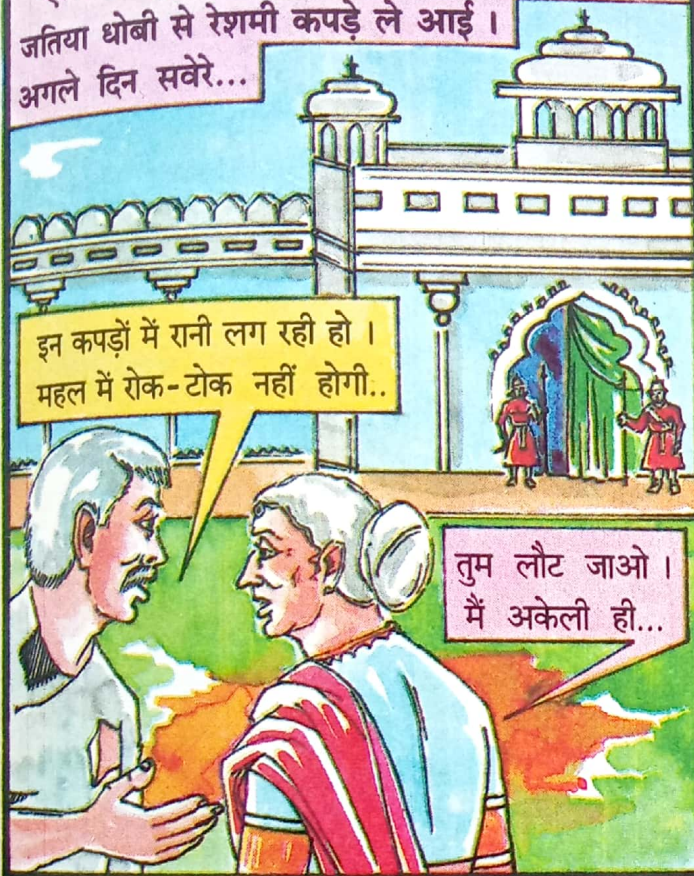
महल के द्वार पर पहुंचकर जतिया ने वह टुकड़ा दिखाकर द्वारपाल से अपनी बात कही...
राजा जी ने ऐसे ही काले निशान वाले टुकड़े के बारे में कहा था..मगर वह तो इस समय गुरुजी के पास..
आप रुको। महाराज से पूछता हूं..
जल्दी पूछ कर आओ..

द्वारपाल ने गुरु जी के पास खड़े राजा से...
महाराज, रेशमी कपड़े पहने एक बुढ़िया..काले निशान वाला कपड़ा लेकर...
मेरे प्राण बचाने वाली ही होगी।..थाल भर अशर्फियां दिला दो। मेरे रथ में बैठाकर घर पहुंचवा दो..
हरि ओउम्!

राजा के रथ में बैठ जतिया आई। बस्ती में हलचल मच गई, मगर...
मैं न कहता था, पगड़ी का यह टुकड़ा कारूं का खजाना है।
मुंह बंद रखो। इस टुकड़े को साफ करके उसके घर में वापस फेंक दो। हम पर किसी को शक न होगा।
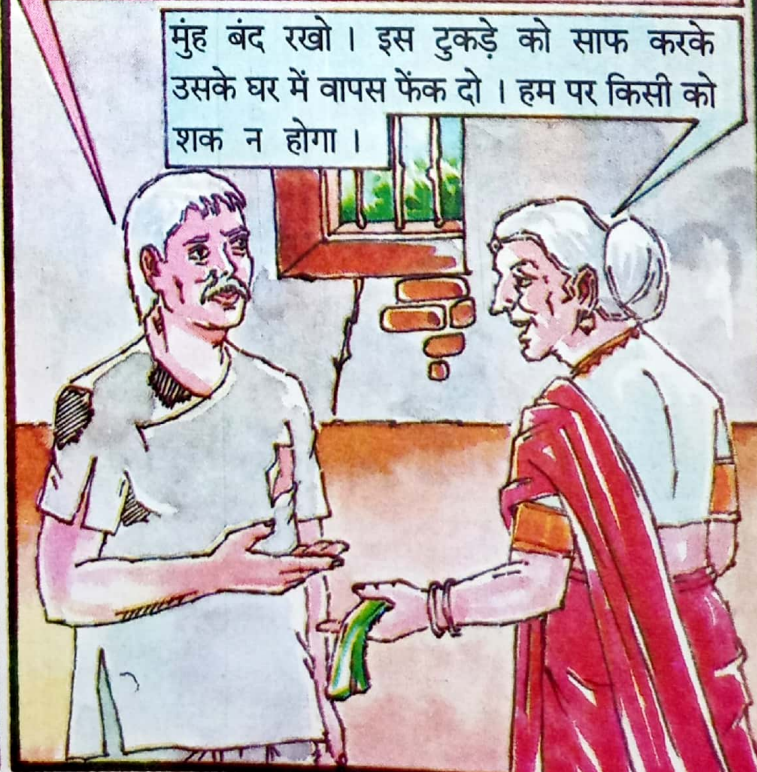
रथ को देख बुढ़िया को टुकड़े की याद आई। कालू ने उसे झोंपड़ी में फेंक ही दिया था। बुढ़िया भी उसे ले राजा से मिलने पहुंची...
महाराज, एक मैली-कुचैली बुढ़िया.. कपड़े का वैसा ही टुकड़ा लिए.. द्वार पर..मगर काला निशान नहीं..
कोई धोखेबाज.. गिरफ़्तार कर लो.. डाल दो कैद में..
ठहरो। दंड देने से पहले सचाई को स्वयं जांचो-परखो..विक्रमादित्य की तरह..
राजा ने कुछ सोच बुढ़िया को अंदर लाने का आदेश दिया...
अरे, आप तो वही हैं।..पर इस टुकड़े पर से वह निशान..और वह कौन थी जो अभी-अभी..
पता नहीं..मैं तो इसे भूल ही गई थी। पड़ोसिन की झोंपड़ी के आगे आपका रथ देखा तो..
तुरंत कालू और जतिया को पकड़ मंगवाया गया। कड़ाई से पूछताछ की, तो सारा भेद खुल गया...
इन दोनों ने हमें धोखा दिया। दूसरे का हक मारा।..इनकी संपत्ति जब्त.. एक-एक वर्ष की कैद..
क्षमा कर दें राजन्। धन का लालच होता ही ऐसा है !
क्षमा !
क्षमा !
बुढ़िया को राजा ने दुगना धन दिया। और...
विक्रमादित्य के सारे गुण एक ही में होने कठिन हैं राजन् ! जब बुद्धि-विवेक पर क्रोध हावी होता है तो..
फिर भी मैं कोशिश करता रहूंगा गुरूजी...

पेट पर मुंह

—शान्ति अग्रवाल

आज से हजारों वर्ष पहले की बात है, अयोध्या के महान प्रतापी राजा दशरथ के पुत्र राम, लक्ष्मण तथा राम की पत्नी सीता चौदह वर्ष के लिए वनवास को गए। वहां पर लंका के राजा रावण ने एक दिन सीताजी को कुटिया में अकेली पाकर छल से उनका हरण कर लिया। राम-लक्ष्मण जब कुटिया में आए और सीताजी को वहां नहीं पाया, तो बहुत दुखी हुए और उन्हें ढूंढ़ने चल दिए।

वे जंगल-जंगल भटकते फिर रहे थे। एक दिन भटकते-भटकते वे एक भयानक वन में पहुंच गए जहां दिन में भी अंधकार था। पर राम-लक्ष्मण तो सीताजी को शीघ्र खोज लेने के लिए व्याकुल थे। वे जंगल के अंदर चले गए।

अचानक एक भयंकर आवाज ने सारे जंगल को कंपा दिया। लगता था, जैसे सैकड़ों शेर एक साथ दहाड़ रहे हों। पशु-पक्षी भयाकुल होकर इधर-उधर भागने लगे। ऐसा लगता था, मानो प्रलय ही आ गई हो। तभी आग की लपट के समान एक तेज रोशनी वन के अंधकार में प्रकट हुई। उसी रोशनी में राम-लक्ष्मण ने देखा कि एक अत्यंत विकराल राक्षस सारे जंगल को रौंदता, लुढ़कता हुआ चला आ रहा है। वह रोशनी उसी राक्षस की आंख की थी।

उन्होंने देखा कि उस राक्षस के न तो पैर थे और न सिर। उसके केवल एक आंख थी, जो उसके सीने पर थी। उसमें से आग की लपटें-सी निकल रही थीं। उसका पर्वत जैसा विशाल आकार था और उसके पेट में मुंह था। एकदम काजल के समान रंग था उसका। ऐसा विचित्र राक्षस तो न उन्होंने कभी देखा था, न सुना था। हां, उसकी बांहें बेहद लम्बी-लम्बी थीं, जिनमें लपेट-लपेट कर वह हाथी, शेर, चीते, भालू जैसे वन के पशुओं को खाता चला आ रहा था। विशाल वृक्ष तो उसके एक ही धक्के में धराशायी हुए जा रहे थे।

इससे पहले कि राम-लक्ष्मण कुछ सोच-समझ पाते, उस राक्षस ने उन्हें अपनी लम्बी-लम्बी भुजाओं में लपेट लिया। गरजता हुआ बोला—"अरे, तुम कौन हो ? मेरे प्रदेश में घुसने की हिम्मत तुमने कैसे की ? इसका परिणाम तुम्हें भुगतना ही पड़ेगा।"

राम ने उसे समझाते हुए कहा—"हम लोग तुम्हारे प्रदेश पर अधिकार करने के विचार से यहां नहीं आए हैं। मेरी पत्नी खो गई है, उसी को खोजते हुए हम लोग अनजाने में यहां आ गए हैं।"

राक्षस क्रोधित होकर बोला—"मैं यह कुछ नहीं जानता। तुम्हें नहीं पता, मेरा नाम कबंध राक्षस है। मैं बहुत भूखा हूं। आज का दिन तो मेरे लिए बड़ा शुभ है। रोज मैं वन के पशु-पक्षियों को खा-खाकर ऊब गया था। आज भाग्य ने मेरे लिए दो मनुष्यों को भेज दिया है। तुम्हें खाकर मुझे कितना आनंद आएगा। अब तुम अपने जीवन का अंत ही समझो।" ऐसा कहकर उसने अपना मुंह खोला, जिसमें लम्बे-लम्बे नुकीले दांत थे। लेकिन तभी राम-लक्ष्मण ने उसकी भुजाएं काट दीं। भयंकर चीत्कार करता हुआ कबंध राक्षस जमीन पर लोटने लगा। बोला—"हे प्रभु, क्या आप राजा दशरथ के पुत्र राम हैं ?"

"हां, मैं राम ही हूं और यह मेरा छोटा भाई लक्ष्मण है। पर तुम कौन हो ?" —राम बोले।

यह सुनकर कबंध पहले तो प्रसन्न हो उठा, फिर

दुखी होकर कहने लगा—

"हे राम, सुनो ! मेरी कथा बड़ी विचित्र है। पहले मैं भी सुंदर था। यह कुरूपता तो मुझे अपने दुष्कर्मों के कारण ही प्राप्त हुई है। वास्तव में मैं दनु का पुत्र कबंध हूं। पहले मैं अत्यंत सुंदर और पराक्रमी था। परंतु मेरा आचरण ठीक नहीं था। मैं राक्षसों जैसा भयानक रूप रखकर ऋषि-मुनियों को डराया, सताया करता था। वे भयभीत होते, तो मैं प्रसन्न होता। एक दिन मैंने भयंकर आकृति धारण करके स्थूलशिरा नामक ऋषि को डराया। वह क्रोधित हो गए और मुझे शाप देते हुए बोले— अरे दुष्ट, जो रूप रखकर तू मुझे सता रहा है, वही रूप अब तेरा सदा रहेगा।

"अब तो मैं बहुत घबराया। मैंने उनके चरण पकड़ लिए। बहुत रोने-गिड़गिड़ाने पर वह बोले— 'दिया हुआ शाप वापस नहीं हो सकता। हां, जब श्रीराम वन में आकर तुम्हारे हाथ काट देंगे, तब तुम फिर अपने सुंदर रूप को पा सकोगे।

"स्थूलशिरा ऋषि के शाप से ग्रस्त मैं अत्यंत दुखी था। तब मैंने तपस्या करके ब्रह्माजी को प्रसन्न करने की ठानी। मैंने घोर तप किया। एक दिन ब्रह्माजी ने प्रसन्न होकर मुझे लम्बी आयु का वरदान दिया। ब्रह्माजी का वरदान पाकर मैं अहंकारी बन गया। अब तो मैं हर समय अहंकार में डूबा रहता। यहां तक कि एक दिन मैं देवराज इंद्र से लड़ने पहुंच गया। इंद्र को बड़ा क्रोध आया और उन्होंने मेरे ऊपर वज्र का प्रहार कर दिया, जिससे मेरा सिर और पैर मेरे शरीर में घुस गए।'

"वह रोषयुक्त वाणी में बोले— हे अधम, अपनी दुर्बुद्धि एवं अहंकार के कारण ही तू इस अधोगति को प्राप्त हुआ है। पितामह ब्रह्मा ने तुझे दीर्घायु होने का वरदान दिया है, इसलिए मैं तेरे प्राण नहीं लूंगा। अब तू इसी रूप में दुःखपूर्ण लम्बा जीवन जिएगा।

"अब मुझे होश आया। मैं पश्चात्ताप करने लगा। मैंने इंद्रदेव की प्रार्थना करते हुए कहा— हे देवों के राजा इंद्र, मुझे क्षमा करो। आपने अपने वज्र के प्रहार से मुझे सिर, मुख और पैर विहीन बना दिया है। इस प्रकार मैं कैसे पेट भर सकूंगा और लम्बे समय तक जी सकूंगा ?'

" मेरी बात सुन, इंद्र ने सोच-विचार कर, मेरे पेट पर मुंह बना दिया। ये लम्बे-लम्बे हाथ दे दिए जिससे मैं अपना आहार प्राप्त कर सकूं।'

अपनी कथा सुनाने के बाद, कबंध बोला—"हे राम, बस तभी से मैं इस कुरूप भारी-भरकम शरीर का बोझा ढोते हुए आपकी प्रतीक्षा कर रहा था। अब आप ही मेरा अंतिम संस्कार करने की कृपा करें, जिससे मुझे शाप से मुक्ति मिल जाए।" ऐसा कहते-कहते कबंध ने अंतिम सांस ली।

राम ने उसकी प्रार्थना स्वीकार करते हुए उसका दाह-संस्कार किया। अचानक एक अत्यंत सुंदर, गौरवर्ण पुरुष चिता से प्रकट हुआ। बोला—"हे राम, आपने कृपा करके मुझे शाप से मुक्ति दिलाई है। मैं आपको बारम्बार प्रणाम करता हूं। अब मैं आपको सीता माता को खोज निकालने का रास्ता बतलाता हूं। ऋष्यमूक पर्वत पर वानरों का राजा सुग्रीव रहता है। आप वहां जाकर उससे मित्रता करें। उसी के द्वारा आपकी सीता का पता लगेगा।"

यह कहकर वह दिव्य पुरुष देवलोक को चला गया।

(वाल्मीकि रामायण)

बालू में सिर

—उमेशप्रसाद सिंह

उत्तंग मुनि आश्रम में रहते थे। मुनि तपस्या करते, बाकी समय दीन-दुखियों की सेवा करते थे। यदि भूला-भटका यात्री आश्रम में आता, तो वहां उसका उचित सत्कार होता था।

आश्रम के पश्चिम में मरुस्थल था। जगह-जगह बालू के पहाड़ थे। वहां धुंधु नाम का दानव रहता था। उसके सौ पुत्र थे। वहीं अनेक दानव भी रहते थे। वे उत्तंग मुनि के आश्रम में हो रहे पूजा-पाठ, हवन आदि में विघ्न डालते थे।

धुंधु ब्रह्माजी से वरदान पाकर अपने को अमर मानता था। तीनों लोकों में उसे कोई पराजित नहीं कर सकता था। इससे दानवों का घमंड बहुत बढ़ गया था। वे आए दिन लोगों को परेशान करते थे।

एक बार धुंधु ने संसार को नष्ट करने की सोची। उसने उज्ज्वालक नामक मरु प्रदेश में तपस्या करने का मन बनाया। अतः अपने सहयोगियों के साथ मिलकर बालू के पहाड़ हटाए। वह जमीन पर लेट गया। फिर उसने अपने शरीर को बालू से ढक लिया। दानव भी बालू में छिप कर रहने लगे। धुंधु तपस्या करने लगा।

तपस्या काल में भी दानव लोगों को सताने से बाज नहीं आए। कोई यात्री या पशु उस रास्ते से जाता, तो दानव बालू से निकलकर उसे मारकर खा जाते थे। धुंधु वर्ष में एक बार बाहर निकलता था। जब वह सांसें छोड़ता, तो चारों ओर आग के गोले गिरने लगते। धरती कांपने लगती। आकाश धुएं और धुंध से ढक जाता था। इस आपाधापी में अनेक लोग मर जाते थे।

एक दिन उत्तंग मुनि भगवान विष्णु की प्रेरणा से राजा बृहदश्व के दरबार में गए। बृहदश्व प्रतापी और न्याय प्रिय राजा थे। मुनि उत्तंग ने कहा—"राजन ! आप धुंधु का वध कर दीजिए। वह संसार का विनाश करने पर तुला है। मेरी प्रार्थना से भगवान विष्णु अपना तेज आपको दे देंगे। फिर आप धुंधु का वध कर सकते हैं।"

उस समय बृहदश्व अपने पुत्र कुवलाश्व को राजगद्दी सौंप कर वन जाने की तैयारी में थे। उन्होंने कहा—"मुनिवर, आपका विचार उत्तम है। पर यह कार्य मेरा पुत्र कुवलाश्व करेगा। मैंने अस्त्र-शस्त्र त्याग दिए हैं।" मुनि यह आश्वासन पाकर लौट गए।

पिता के आदेश से कुवलाश्व ने दानव से युद्ध करने के लिए प्रस्थान किया। साथ में सेना थी। भगवान विष्णु ने अपना तेज कुवलाश्व को प्रदान कर दिया था। अब कुवलाश्व परम प्रतापी हो गया था।

कुवलाश्व धुंधु के स्थान पर जा पहुंचा। वहां बालू के सिवाय उसे कुछ नजर नहीं आया। उसने वहां बालू की खुदाई शुरू करा दी। बारह दिन बाद उसे धुंधु दिखाई पड़ा। लड़ाई शुरू हो गई।

दानव तो मायावी थे। कुछ दानवों ने अपने रूप बदल लिए। कुछ अपने मुंह से आग के गोले उगलने लगे। इससे कुवलाश्व के अनेक सैनिक मारे गए।

कुवलाश्व मौका पाकर धुंधु पर टूट पड़ा। धुंधु की माया से वहां जल ही जल दिखाई देने लगा। कुवलाश्व ने अग्नि बाण से सारा जल सुखा दिया। फिर उसने धुंधु के सिर पर वज्र का प्रहार किया। प्रहार जबरदस्त था। उससे धुंधु के सिर के टुकड़े-टुकड़े हो गए। वह वहीं ढेर हो गया। उसके मरते ही सारी माया छू मंतर हो गई।

प्रजा ने राहत की सांस ली। चारों तरफ उत्तंग मुनि की जय-जय हो रही थी। क्योंकि उन्हीं के प्रयास से धुंधु का विनाश हुआ था। **(वायु पुराण)**

छल का बल

—रमेश कौशिक

सतयुग की बात है। दक्ष प्रजापति की दो पुत्रियां थीं। एक का नाम था कद्रू और दूसरी थी विनता। दोनों का विवाह कश्यप ऋषि से हुआ था। एक दिन कश्यप बहुत प्रसन्न थे। उन्होंने अपनी पत्नियों से वरदान मांगने को कहा। कद्रू ने कहा—"एक हजार बलशाली नाग मेरे पुत्र हों।"

विनता बोली—"मेरे दो पुत्र हों, जो कद्रू के पुत्रों से श्रेष्ठ हों।"

ऋषि ने कहा—"ऐसा ही होगा।"

समय बीतने पर कद्रू के एक हजार नागपुत्र उत्पन्न हुए। विनता के दो पुत्र हुए, अरुण और गरुड़। अरुण पैदा होते ही आकाश में उड़ गया। वह सूर्य के रथ का सारथि बन गया। कहा जाता है कि प्रातःकाल जो लालिमा दिखाई देती है, वह उसी का रूप है।

एक दिन कद्रू और विनता वन में घूम रही थीं। वहां उन्हें समुद्र मंथन से निकला उच्चैःश्रवा नामक घोड़ा दिखाई दिया। कद्रू ने विनता से पूछा—"बताओ, यह घोड़ा किस रंग का है?"

—"यह श्वेत रंग का है।"

कद्रू ने कहा—"श्वेत रंग का तो है, किंतु इसकी पूंछ काली है।"

विनता बोली—"नहीं, ऐसा तो नहीं है।"

"अच्छा, हम दोनों की शर्त रही। जिसकी बात असत्य हो, वह दासी बनकर रहे।"—कद्रू ने सुझाव दिया।

विनता ने कहा—"ठीक है।" और इसके बाद अगले दिन उस स्थान पर फिर आने का वायदा कर, दोनों बहनें कुटिया में पहुंचीं।

कद्रू ने विनता को छल से हराने के लिए अपने नागपुत्रों को बुलाया और कहा—"तुम काले बाल बनकर उच्चैःश्रवा घोड़े की पूंछ से लिपट जाओ, ताकि उसकी पूंछ काली दिखाई पड़े।" पुत्रों ने ऐसा ही किया।

अगले दिन कद्रू और विनता वन में उस स्थान पर पहुंचीं। घोड़े के समीप जाकर उन्होंने देखा, तो पाया कि घोड़ा तो श्वेत है, किंतु उसकी पूंछ काली है। विनता शर्त हार गई। वह कद्रू की दासी बन गई।

एक दिन कद्रू के नागपुत्रों ने गरुड़ से कहा—"तुम तो उड़ना जानते हो। सारा संसार तुम्हारा देखा हुआ है। हमें किसी सुंदर द्वीप पर ले चलो।" गरुड़ यह सुनकर अपनी मां के पास गया। नागों की बात बताकर उसने कहा—"मैं उनकी बात नहीं मानूंगा।" मां ने समझाया कि दासी पुत्र होने के कारण वह नागपुत्रों का कहा मान ले।

मां की बात सुनकर गरुड़ चिंतित हुआ। उसने नागों से जाकर कहा—"तुम मुझसे जो भी मांगोगे, मैं वही लाकर दूंगा। बस, तुम मेरी मां को दासता से

मुक्त कर दो ।'' यह सुनकर नाग प्रसन्न हुए । उन्होंने गरुड़ से कहा—''तुम हमें कहीं से अमृत लाकर दे दो, तो हम तुम्हारी मां को दासता से मुक्त कर देंगे ।''

गरुड़ अमृत लेने के लिए चल पड़ा । वह आकाश में उड़ा जा रहा था, तभी मार्ग में उसे एक विशाल वट वृक्ष दिखाई दिया । उसकी शाखाएं दूर-दूर तक फैली थीं । गरुड़ विश्राम के लिए उसकी एक शाखा पर बैठ गया । शाखा उसके भार से चरमराकर नीचे गिरने लगी । उसने तुरंत शाखा को अपने पंजों में संभाल लिया । तभी उसने देखा—उस शाखा पर उलटा सिर करके बालखिल्य ऋषि-गण लटक रहे हैं । उसने सोचा—'यदि पंजों से शाखा छूट गई, तो ऋषि-गण मर जाएंगे ।' अतः वह शाखा को अपनी चोंच में दबा कर उड़ने लगा ।

गरुड़ उड़ते-उड़ते गंधमादन पर्वत पर पहुंचा । वहां उसके पिता कश्यप ऋषि तपस्या कर रहे थे । अपने पुत्र को परेशान देखकर उन्होंने बालखिल्य ऋषियों से प्रार्थना की—''गरुड़ किसी अच्छे कार्य के लिए जा रहा है । आप इसे आशीर्वाद दीजिए कि यह अपने कार्य में सफल हो ।'' कश्यप ऋषि की बात मानकर उन ऋषियों ने गरुड़ को आशीर्वाद देकर वट वृक्ष की शाखा छोड़ दी ।

गरुड़ ने अब अधिक वेग से उड़ान भरी । उसे अपनी ओर आता देखकर देवता चिंतित हो गए । इंद्र भागे-भागे अपने गुरु बृहस्पति के पास पहुंचे और बृहस्पति से पूछा कि गरुड़ स्वर्गलोक की ओर क्यों आ रहा है? उन्होंने कारण बता दिया ।

यह सुनकर इंद्र परेशान हो गए । अमृत घट की रक्षा के लिए उन्होंने सभी देवताओं को तैनात कर दिया । स्वयं भी अस्त्र-शस्त्र लेकर घट के पास खड़े हो गए ।

गरुड़ वहां पहुंचा । उसने अपने विशाल पंखों से इतनी धूल उड़ाई कि देवताओं को दिखाई देना बंद हो गया । चोंच के वार से देवताओं के शरीर क्षत-विक्षत होने लगे । वे अमृत-घट छोड़कर इधर-उधर भागने लगे ।

मौका पाते ही गरुड़ ने अमृत घट को अपने पंजों में दबाया और लौट पड़ा । अब गरुड़ नागों के पास पहुंचा । उसने नागों से कहा—''मैं तुम्हारे कहे अनुसार अमृत ले आया हूं । अब तुम मेरी मां को दासता से मुक्त कर दो ।'' यह सुनकर नाग बहुत प्रसन्न हुए । उन्होंने अमृत घट को कुश के आसन पर रख दिया, फिर विनता को दासता से मुक्त कर दिया ।

इंद्र को इस बात का पता था कि नागों और उनकी मां कद्रू ने विनता को छला है । अतः अमृत पान करने से पहले जब नाग स्नान करने गए, तो इंद्र अमृत घट को उठाकर स्वर्ग ले आए । नाग जब स्नान करके लौटे, तो अमृत घट को न पाकर बहुत दुखी हुए । उन्होंने यह सोचकर कि शायद कुश के आसन पर अमृत की कुछ बूंदें गिर गई हों, उसे चाटना शुरू कर दिया । ऐसा करने से सभी नागों की जीभें बीच में से चिरकर दो हो गईं ।

(महाभारत)

एक से चार

—चंद्रकुमार शर्मा

जम्बूद्वीप में ततमिति नाम का राज्य था। वहां का राजा विपश्चित धार्मिक और दयालु था।

वह सबका आदर करता था। राज्य में विद्वान साहित्य रचने में लगे रहते थे। ऋषि-मुनि धर्म-अनुष्ठानों में व्यस्त रहते थे। कलाकार अपनी कलाओं को विकसित करते थे। राजा धर्मानुसार राज्य करता था।

प्रजा राजा से बहुत खुश थी। वह राजा को जी-जान से चाहती थी। राजा के इशारे पर उसके सैनिक मरने-मिटने को तैयार रहते थे।

एक दिन राजा दरबार में बैठा था। कलाकार अपनी-अपनी कलाकृतियां दिखाकर राजा से पारितोषिक ले रहे थे। उसके बाद संगीत की बारी आई। वाद्य-वृंद झनक पड़े। संगीत गूंजने लगा।

सहसा एक प्रहरी दौड़ता हुआ आया। उसके पीछे लहुलूहान एक सैनिक भी था। राजा ने मंत्री की ओर देखा। मंत्री ने कहा—"सैनिक ! बताओ, क्या बात है ?"

—"महाराज, पूर्व दिशा राज्य का मंत्री विजय अभियान पर निकला था।" यह सुन दरबार में सन्नाटा छा गया।

सैनिक ने फिर कहना शुरू किया—"महाराज, शत्रु ने इतनी जोर से आक्रमण किया कि कुछ सोचने का समय ही नहीं मिला और..."

"और क्या ?"—मंत्री ने पूछा।

—"और शत्रु की सेना ने मंत्री को यमलोक पहुंचा दिया।"

राजा की आंखें लाल हो गईं। तभी तीन सैनिकों ने पश्चिम, उत्तर तथा दक्षिण की सेनाओं की पराजय का समाचार राजा को दिया।

सभी योद्धाओं के हाथ अपने आप अपने अस्त्र-शस्त्रों पर चले गए। सेनापति गंभीर हो गया। नागरिक भी भाग-भागकर सभा में आने लगे। प्रहरियों ने संदेश दिया कि सारा शहर शत्रु-सेना से घिर चुका है।

राजा अपने सिंहासन से उठ खड़ा हुआ और बोला—"शत्रुओं को एकदम रोकना अत्यंत आवश्यक है। इस मामले में देर करना ठीक नहीं।"

सेनापति ने कहा—"राजन, आदेश की प्रतीक्षा है। सेना युद्ध के लिए तैयार है।"

"सेना तैयार करो। युद्ध का शंख बजाओ।"—कहते हुए राजा पूजा गृह में चला गया।

राजा अग्निदेव का उपासक था। उसने अग्निदेव को प्रसन्न कर रखा था। राजा ने अग्नि से प्रार्थना की—"हे अग्निदेव ! आप मेरे आराध्य हैं। आज मेरे राज्य पर संकट आ पड़ा है।"

कुछ देर बाद अग्नि शांत हो गई। अग्निकुंड में से चार विपश्चित निकले। वे चारों युद्ध मैदान की ओर बढ़े। उन्हें देख, सेना में और उत्साह आया। उन्होंने शत्रुओं पर जोरदार हमला किया। शत्रु-सैनिक भाग खड़े हुए।

राजा ने सैनिकों को शत्रुओं का पीछा करने को कहा। सैनिक उनके पीछे भागे।

कुछ दूरी पर समुद्र आ गया। शत्रु सेना वहां खड़ी हो गई। शत्रु पुनः युद्ध करने की सोचने लगे। लेकिन उन्हें तैयारी करने का समय ही नहीं मिला। वे प्राण बचाने के लिए समुद्र में कूदने लगे। समुद्र में डुबकी लगाते, बचते-बचाते वे भाग लिए।

तब तक चारों विपश्चित समुद्र तट पर पहुंच गए थे। उन्होंने दुश्मन को समुद्र में डूबते और भागते देखा।

उनमें से एक विपश्चित ने कहा—"हम चार हैं, और दिशाएं भी चार हैं। जीवन का रहस्य जानने के लिए हम में से प्रत्येक को अलग-अलग दिशा में जाना चाहिए।"

और फिर विपश्चित अलग-अलग दिशाओं में चल दिए।

(योग वासिष्ठ)

नंदन ज्ञान पहेली

१००० रु. पुरस्कार
कोई शुल्क नहीं

नियम और शर्तें

- पहेली में १७ वर्ष तक के पाठक भाग ले सकते हैं।
- **रजिस्ट्री से भेजी गई कोई भी पूर्ति स्वीकार नहीं की जाएगी।**
- एक व्यक्ति को एक ही पुरस्कार मिलेगा।
- सर्वशुद्ध हल न आने पर, दो से अधिक गलतियां होने पर, पहेली की पुरस्कार राशि प्रतियोगियों में वितरित करने अथवा न करने का अधिकार सम्पादक को होगा।
- पुरस्कार की राशि गलतियों के अनुपात में प्रतियोगियों में बांट दी जाएगी। इसका निर्णय सम्पादक करेंगे। उनका निर्णय हर स्थिति में मान्य होगा। किसी तरह की शिकायत सम्पादक से ही की जा सकती है।
- किसी भी तरह का कानूनी दावा, कहीं भी दायर नहीं किया जा सकता।
- यहां छपे कूपन को भरकर, डाक द्वारा भेजी गई पहेली ही स्वीकार की जाएगी। भेजने का पता है—
- **सम्पादक, 'नंदन' (ज्ञान-पहेली), हिंदुस्तान टाइम्स हाउस, १८-२०, कस्तूरबा गांधी मार्ग, नई दिल्ली-११०००१**
- एक नाम से, पांच से अधिक पूर्तियां स्वीकार नहीं की जाएंगी।

संकेत

बाएं से दाएं

१.पापा, मैं छुट्टियों में कुछ—बनाऊं !
(चित्र/मित्र)

२.जंगल में पहुंचा, तो अचानक मुझे उसी —पत्थर की याद आई।
(नीले/काले)

४. दिखाओ अम्मां,—की चिट्ठी कहां है ?
(मामा/माशा)

८.ठीक है, तो सुनो किस्सा हंसमुख—का !
(राजा/रानी)

९.रूखा-सूखा खाकर मजे से—रहा हूं !
(गा/जी)

११.अरे, तुम्हारे सिर पर यह—कैसे ?
(टाट/चोट)

१२.इस साल गरमियों में यहां घूम आओ।

ऊपर से नीचे

३.कोई अच्छा-सा—सुनाओ गंगाधर, जिससे सब झूम उठें।
(राग/फाग)

५.अच्छा, फिर तुम इतने—क्यों हो ?
(सुखी/दुखी)

६.बड़ी विचित्र आकृति वाली—देखी हमने।
(नानी/नाव)

७.चलो रे जूतो,—करो !
(सैर/पार)

१०.बाजे तिक-तिक ता-धिन्ना !

नंदन ज्ञान-पहेली : ३०५

नाम ______________________

उम्र ____ पता ______________________

____
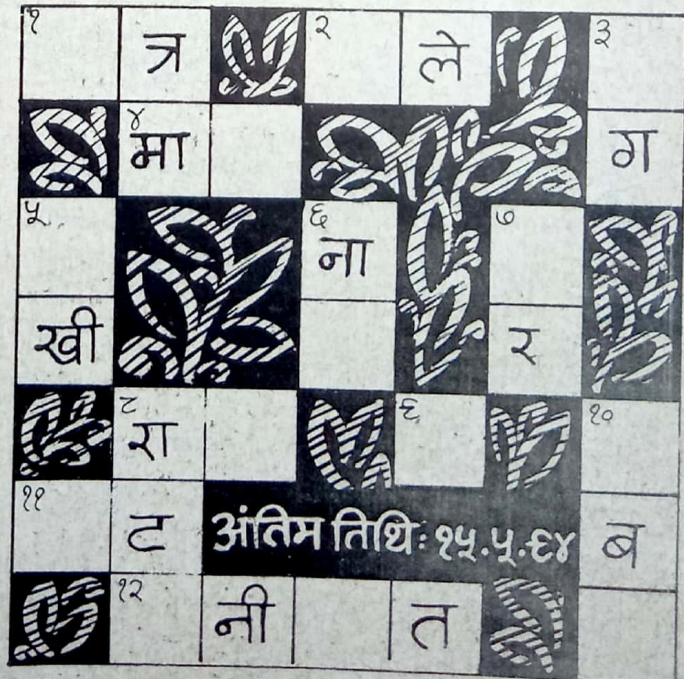
अम्लरोग? भूख की कमी? कब्ज़?

पेट की गड़बड़ी?

स्वास्थ्य और सुन्दरता का रक्षक-लिवर।

सर्वाधिक रोगों का कारण – पेट की खराबी, अस्वस्थ्य लिवर, और अनिद्रा। स्वस्थ्य लिवर हर रोग का निदान।

....डा. सरकार

पेट की गड़बड़ी दूर करने और लिवर सुरक्षित रखने के लिए

डा. सरकार का एक अनोखी खोज आयुर्वेदिक लिवर टॉनिक।

लिवोसिन

सेवन विधि :

जब तक सीने की जलन, पाचन शक्ति में वृद्धि, अम्लरोग, कब्ज़ियत, भूख की कमी, पेट की गड़बड़ी, यकृत की अस्वस्थ्यता दूर न हो तब तक एक ग्लास गुनगुने पानी के साथ **लिवोसिन** सुबह खाली पेट और रात को सोने के समय नियमित सेवन करें।

लिवोसिन

एक आयुर्वेदिक लिवर टॉनिक

आर्निकाप्लस-ट्रायोफर निर्माता का सहयोगी संस्था - की आयुर्वेदिक खोज का एक अनोखा उपहार।

जुपिटर फार्मासिटिकल्स प्रा० लि०
२५, इडन हॉस्पिटल रोड़, कलकत्ता-७३
दूरभाष-२६०१५६/२७-०२२४

एलोपैथिक
आयुर्वेदिक
होमियोपैथिक
औषध प्रस्तुतकारक

Marketed by :
allen's india
Allen's India Marketing Pvt. Ltd.
ArnikaPlus Apartment, Sealdah
35, A. P. C. Road, Calcutta-9
Phone : 350-9026

जिसके सहयोग से आपको मिले आरोग्य में विश्वास।

Allen's Ad. India

Branch Office : Duggal House, Bank Road, Patna-800 001, Ph : 23-4953
Branch Office : 84/77B, Narayan Bagh, G. T. Road, Kanpur-208003, Ph : 24-2844

तीर गायब

—शान्ता ग्रोवर

किसी समय की बात है, वाराणसी में ब्रह्मदत्त नामक राजा राज्य करते थे। एक बार बोधिसत्व ने उनके यहां पुत्र के रूप में जन्म लिया। राजकुमार का नाम रखा—असदिस। वह कुछ बड़ा हुआ, तो राजा को एक और पुत्र की प्राप्ति हुई। उसका नाम रखा गया—ब्रह्मदत्त कुमार।

बोधिसत्व सोलह वर्ष के हुए तो वह तक्षशिला चले गए। वह वहां से वेद-शास्त्र आदि पढ़कर वाराणसी लौट आए। उस समय राजा ब्रह्मदत्त मृत्यु शय्या पर थे। वह असदिस को राजा और ब्रह्मदत्त कुमार को उप राजा बनाने को कहकर स्वर्ग सिधार गए।

जब असदिस को राज्य दिया जाने लगा, तो वह बोले—"मुझे राज्य की जरूरत नहीं है। अतः ब्रह्मदत्त कुमार का राज्याभिषेक कर दिया जाए।" ऐसा ही हुआ।

छोटे भाई के राज्य करते हुए असदिस जैसे पहले साधारण रूप में रहते थे, उसी तरह अब भी रहते थे।

एक बार छोटे भाई राजा ब्रह्मदत्त कुमार को कुछ ईर्ष्यालु लोगों ने असदिस के विरुद्ध भड़का दिया। ब्रह्मदत्त उनकी बातों में आ गया। उसने सैनिकों को आदेश दिया—"जाओ, मेरे बड़े भाई को बंदी बनाकर कारागार में डाल दो।"

असदिस के एक भक्त ने उन्हें इस बात की सूचना दी। उन्हें ब्रह्मदत्त का यह व्यवहार अच्छा नहीं लगा। वह राज्य छोड़कर दूसरे देश चले गए। वहां के राजा के पास असदिस ने अपने आने की सूचना भिजवाई। राजा ने उन्हें बुलवा भेजा। पूछा—"तुम्हारी क्या विशेषता है?"

असदिस ने उत्तर दिया—"मैं एक कुशल धनुर्धारी हूं। एक वर्ष के लिए मुझे एक लाख स्वर्ण मुद्राएं मिलनी चाहिएं।"

राजा ने उन्हें गौर से देखा। उन्हें असदिस प्रतिभाशाली लगे। राजा ने उन्हें अपनी सेवा में रख लिया।

एक दिन राजा अपने उद्यान में भ्रमण कर रहे थे। हवा मंद-मंद बह रही थी। एक आम्र वृक्ष के नीचे जाकर लेट गए। लेटते ही ऊपर नजर गई, एक बहुत रसीला आम लटक रहा था। आम को पेड़ पर चढ़कर तोड़ा नहीं जा सकता था। उन्होंने धनुर्धारियों को बुलाकर पूछा—"क्या इस आम को तीर मारकर गिरा सकते हो?"

—"महाराज! यह तो कोई कठिन कार्य नहीं है, आज आप नए धनुर्धर की कुशलता देखने का कष्ट करें।"

"ठीक है, उसे ही बुलाओ।"—राजा ने आदेश दिया।

असदिस को वहां बुलाया गया। राजा ने उससे कहा—"क्या तुम इस आम को तीर से गिरा सकते हो?"

—"जी महाराज, थोड़ी जगह मिलने पर आम पर निशाना लगा दूंगा।"

"जगह कहां चाहिए?"—राजा ने पूछा।

"जहां आपकी शय्या है।"—असदिस ने उत्तर

दिया। राजा ने शय्या हटवा जगह बना दी।

असदिस ने मेढ़े के सींग का बना धनुष उठाया, मूंज की डोरी बांधी। कमान में तीर डाले। वह पेड़ के नीचे जाकर एक तीर धनुष पर चढ़ाते हुए बोले—"महाराज, इस आम को ऊपर जाने वाले तीर से गिराऊं अथवा नीचे आते तीर से?"

"वत्स, मैंने ऊपर जानेवाले तीर से गिराना तो बहुत देखा है, लेकिन नीचे आने वाले तीर से गिराते नहीं देखा। इसलिए नीचे आने वाले तीर से गिराओ।"—राजा बोला।

"महाराज, यह तीर आम के डंठल के ठीक बीच से होता हुआ ऊपर जाएगा। फिर नीचे उतरते हुए निश्चित जगह पर लगकर आम को तोड़ता हुआ यहीं पहुंचेगा।"—यह कहते हुए असदिस ने जोर लगाकर तीर छोड़ दिया। आम के डंठल के बीच से होता हुआ तीर ऊपर चला गया। तीर दिखना बंद हो गया। लोग हैरान थे। तीर कहां गायब हो गया? तभी हवा में से होता हुआ वह तीर नीचे आने लगा, बिजली कड़कने की आवाज होने लगी।

राजा ने पूछा—"यह आवाज कैसी है?"

असदिस बोले—"महाराज, यह तीर के लौटने की आवाज है।"

लोग डरकर इधर-उधर भागने लगे। असदिस ने कहा—"आपलोग घबराइए मत। मैं तीर को जमीन पर गिरने ही नहीं दूंगा।" उन्होंने थोड़ा उछलकर ऊपर ही एक हाथ में तीर ले लिया। दूसरे हाथ में आम था। लोग यह देख तालियां बजाने लगे। राजा भी बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने असदिस को बहुत-सा धन इनाम में दिया।

उधर असदिस के भाई को अकेला और दुर्बल समझकर पड़ोस के सात राजाओं ने वाराणसी को घेर लिया। उन्होंने ब्रह्मदत्त कुमार को संदेश भेजा—'अपना राज्य हमारे सुपुर्द कर दो, नहीं तो युद्ध के लिए तैयार हो जाओ।' यह जान ब्रह्मदत्त बहुत घबराया। उसे अपने बड़े भाई की याद आई। उसने अपने दूत चारों दिशाओं में दौड़ाए। दूत ने ब्रह्मदत्त को असदिस के पड़ोसी राज्य में रहने की खबर दी।

ब्रह्मदत्त ने उससे कहा—"तुम उनके पास चले जाओ। मेरी ओर से उनके चरणों में प्रणाम कर क्षमा मांगना और आदर सहित यहां ले आना।" राजा ने उसे आदेश दिया। दूत ने असदिस को जाकर सारी बात बताई। भाई को संकट में देखकर तुरंत राजा से अनुमति लेकर असदिस वाराणसी पहुंचे। भाई को सामने पाकर ब्रह्मदत्त कुमार की जान में जान आई। वह रोते हुए भाई के चरणों में गिर गया। असदिस ने उसे उठाकर गले लगा लिया। वह सांत्वना देते हुए बोले—"तुम्हें चिंता करने की कोई जरूरत नहीं है। अब मैं आ गया हूं। कोई भी तुम्हारा बाल बांका नहीं कर सकता।"

असदिस ने एक कागज लिया। उस पर लिखा—'मैं असदिस कुमार आ गया हूं।' फिर उस कागज को एक तीर पर लगाकर शत्रु के खेमे में पहुंचा दिया। दूसरा तीर लिया। उस पर कागज लगाया। उस पर लिखा—'जिन्हें जान प्यारी हो, वे यहां से भाग जाएं।' इस तीर को लेकर वह अट्टालिका पर चढ़ और जोर लगाकर तीर छोड़ दिया। एक शिविर में सातों राजा भोजन कर रहे थे। तीर वहां जाकर सोने की थाली के बीच में गिरा। कागज पर लिखे शब्द पढ़कर सभी राजा भाग खड़े हुए।

वाराणसी के लोग शत्रु को भागते देख बहुत खुश हुए। वे खुशी से बोल पड़े—"बिना खून बहाए ही हमारे राजा के भाई ने हमारे कष्ट को दूर कर दिया।"

ब्रह्मदत्त असदिस से बोला—"भैया, मैंने आप पर नाहक संदेह करके बहुत बड़ी गलती की थी। इस राज्य के सही उत्तराधिकारी आप ही हैं। अब आप ही इस राज सिंहासन पर बैठें।"

असदिस छोटे भाई के कंधे को थपथपाते हुए बोले—"ब्रह्मदत्त, मुझे तो सांसारिक चीजों से कोई लगाव नहीं है। मैं अब संन्यास आश्रम को ग्रहण करूंगा। मुझे अब वन जाने की आज्ञा दो।" यह कहकर असदिस वन को चल पड़े। (जातक)

मांगो वर

—सविता चड्ढा

महाभारत का युद्ध समाप्त हो गया था। भीष्म बाण शैया पर लेटे थे। उन्हें इच्छा मृत्यु का वरदान मिला ही था। एक दिन युधिष्ठिर ने पूछा—"पितामह, कोई मनुष्य मरकर पुनः जीवित हो सकता है? आपने कभी कोई ऐसी घटना देखी या सुनी हो, तो हमें बताएं?"

भीष्म ने कहा—"हे कुंती नंदन, प्राचीन काल में नैमिषारण्य क्षेत्र में रहने वाले गिद्ध और गीदड़ की कथा सुनाता हूं। इससे तुम्हें अपने प्रश्न का उत्तर मिल जाएगा।"

भीष्म ने कहना शुरू किया — एक ब्राह्मण के घर एक पुत्र पैदा हुआ। वह अत्यंत सुंदर था। लेकिन वह बचपन में ही चल बसा। सब फूट-फूटकर रोने लगे। कुछ समय बाद मृत बालक का शव उठाकर वे श्मशान को चल दिए। वहां मृत शरीर को रखकर वे विलाप करने लगे।

उनका रोना सुनकर, वहां एक गिद्ध आया। वह बोला—'मनुष्यो, इसको यहीं छोड़, तुम तुरंत लौट जाओ। देर मत करो।'

गिद्ध की बातें सुनकर वे जोर-जोर से विलाप करते हुए शव को धरती पर रखकर लौटने लगे। तभी काले रंग का एक गीदड़ अपनी मांद से निकलकर उनके पास आया। बोला—'तुम सब निर्दयी हो। अभी सूर्यास्त भी नहीं हुआ है। बालक को लाड़-प्यार करो। शायद अच्छा समय आ जाए और बालक जी उठे।'

अपनी बातों का असर न होते देख, गीदड़ ने फिर कहा —'यह वही बालक है जिसकी मीठी बातों से तुम हर्षित होते थे। पशु-पक्षी भी अपने बच्चों को इतनी निर्दयता से छोड़कर नहीं जाते, पर तुम मनुष्यों को शोक कहां?'

अब गीदड़ की बातों का उन लोगों पर असर हुआ। वे मृत बालक के शरीर की देखरेख के लिए फिर श्मशान में लौटे।

गिद्ध ने जब उन्हें लौटते देखा, तो बोला—'तुम मूर्ख गीदड़ की बातों में क्यों आ गए? शोक और दीनता छोड़ो। तुम्हारे शोक से यह बालक जीवित नहीं हो सकता। घर लौट जाओ।'

यह सुन गीदड़ बोला—'अपनी कामना की सिद्धि के लिए सदा प्रयत्न करते रहना चाहिए। सूर्यास्त न हो जाए, तब तक यहां ही रुक जाओ।'

गीदड़ की बात सुन गिद्ध को क्रोध आ गया। वह बोला— 'मैं हजारों वर्ष का हो गया हूं। मैंने आज तक किसी को मरकर पुनः जीवित होते नहीं देखा। तुम्हारा स्नेह बेकार है। अतः तुम सब घर लौट जाओ।'

गीदड़ बोला—'तुम लोग इसकी बातों में मत आओ। इस बालक के चमकते हुए चेहरे को देखो। श्रीरामचंद्र ने शम्बूक को मारा था। धर्म के प्रभाव से मरा हुआ वह पुनः जी उठा था। हो सकता है, कोई सिद्ध पुरुष या देवता तुम दुखियों पर दया कर इसे जीवित कर दे।'

गीदड़ की ऐसी बातें सुनकर, बालक के माता-पिता ने उसके शव को गोद में उठाकर रख लिया और रोने

लगे। उनके रोने की आवाज सुनकर गिद्ध उनके पास पहुंचा। बोला—'बड़े-बड़े तपस्वी, धनवान और बुद्धिमान भी मृत्यु के अधीन हैं। इसके जीवन का भरोसा न करो। भगवान शिव, ब्रह्माजी, भगवान विष्णु ही अपने वरदान से इस बालक को पुनः जीवित कर सकते हैं।'

भाई-बंधु अपने घर की ओर चल दिए। गीदड़ ने उन्हें समझाया—'यहां अनाप-शनाप बकने वाले बहुत हैं। प्रिय वचन बोलने वाले कम हैं। तुम गिद्ध की बातों में आकर प्रेम शून्य हो गए हो?'

युधिष्ठिर चुपचाप यह कथा सुन रहे थे। उन्होंने भीष्म को बीच में टोकना उचित नहीं समझा। भीष्म ने कहा—''हे राजन, गीदड़ सदा मरघट में रहता था। उसे अपना स्वार्थ सिद्ध करना था। उसने मीठे वचन बोलकर बालक के बंधु-बांधवों को वहीं रोक लिया।

गिद्ध और गीदड़ दोनों अपने स्वार्थों को देखते हुए बातें कर रहे थे। दोनों ही भूखे थे। गिद्ध कहता, सूर्य अस्त हो गया है। गीदड़ कहता था कि सूर्यास्त नहीं हुआ। दोनों को भूख सता रही थी। वे अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए धर्म और शास्त्र का आधार लेकर बातें बना रहे थे। एक पशु था और दूसरा पक्षी था। एक की बातें सुनकर सम्बंधी ठहर जाते और दूसरे की बातें सुनकर आगे बढ़ जाते थे। वे कभी आगे बढ़ते, तो कभी पीछे लौटते।

इतने में पार्वती के कहने से भगवान शंकर उन सम्बंधियों के समक्ष प्रकट हो गए। भगवान शिव ने उनसे पूछा—"मैं तुम्हें क्या वर दूं?"

भगवान शिव के वचन सुनकर बालक का पिता बोला—'हम इसके बिना मृत समान हो रहे हैं। आप इसे पुनः जीवित करने का कष्ट करें।'

भगवान शिव ने बालक को पुनः जीवित कर दिया। उसे सौ वर्षों की आयु प्रदान की। बंधु-बांधव भगवान का स्मरण करते हुए अपने घर लौट गए।

भीष्म ने कहा—''यदि मनुष्य दृढ़ निश्चय के साथ प्रयत्न करता रहे, तो भगवान की कृपा से मनवांछित फल पा ही लेता है।'' **(महाभारत)**

आधा वचन

—फिगार बुलन्दशहरी

कश्यप तेजस्वी और धर्मात्मा महर्षि थे। उनकी पत्नी का नाम अदिति था। अदिति उनकी दिन-रात सेवा करती। एक दिन कश्यप ने प्रसन्न हो, अदिति से कहा—''मैं तुम्हारी सेवा से बहुत खुश हूं। आज तुम मुझसे मनचाहा वर मांग लो।''

यह सुन अदिति खुश हो गई। वह बोली—''हे नाथ! देवताओं ने मेरे सौ पुत्र मार डाले हैं। अब आप मुझे ऐसा पुत्र दें, जिसे देवता न मार सकें।''

''ऐसा ही होगा, लेकिन तुम्हारे उस पुत्र को सिर्फ भगवान शंकर ही मार सकेंगे।''—कश्यप ने अदिति से कहा।

समय गुजरा। अदिति के एक पुत्र पैदा हुआ। उसके हजार सिर, दो हजार पांव तथा दो हजार आंखें थीं। वह घमंड से चूर होकर अंधे की तरह चलता था। उसका नाम भी अंधक पड़ गया। वह अत्याचारी था। सभी उससे डरते थे।

अंधक युवा हो चला था। अब उसके अत्याचार भी बढ़ते ही जा रहे थे। वह यज्ञ करते साधु-संन्यासियों का अपहरण कर लेता। उन्हें परेशान करता। फलतः धार्मिक अनुष्ठान बंद हो गए।
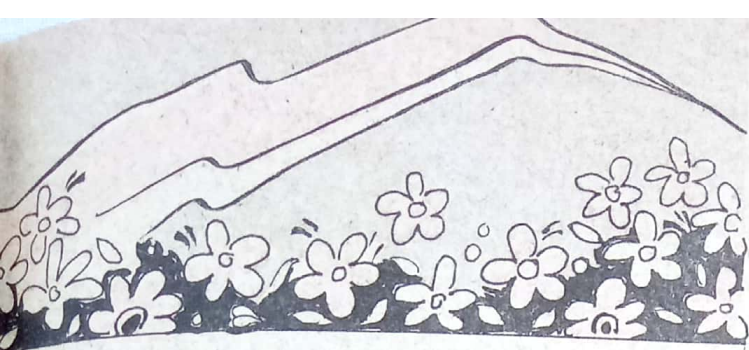
महर्षि कश्यप और अदिति ने अंधक को खूब समझाया। लेकिन सब बेकार। वह एक कान से सुनता और दूसरे से निकाल देता।

देवता परेशान हो उठे। वे अंधक से मुक्ति पाने के लिए उपाय सोचने लगे। उन्हें पता भी था कि अंधक को केवल शंकर भगवान ही मार सकते हैं।

देवता शंकरजी से मिलने चल पड़े। रास्ते में उन्हें देवर्षि नारद मिल गए। देवताओं की बात सुन वह चिंतित हो उठे। वह बोले—"मैं इसके लिए कोई उपाय खोजता हूं। इसका हल शीघ्र ही निकल जाएगा। आप निडर होकर अपने-अपने घर जाइए।"

देवता नारद का यह आश्वासन पाकर लौट गए। नारद जी वहीं विचार करने लगे। उनके दिमाग में एक युक्ति आ गई। वह वहां से चल दिए। वह मंदार पुष्प की माला पहन, अंधक के पास पहुंचे। मंदार की महक अंधक को भा गई। वह नारद जी से बोला—"हे मुनि! यह कौन-सा पुष्प है? यह कहां मिलता है?"

"यह मंदार पुष्प है और मंदार पर्वत पर स्थित काम्यक उपवन में ही मिलता है।"—नारद जी मुसकराते हुए बोले।

—"मुनिवर, मुझे इस पुष्प की महक बहुत अच्छी लग रही है। क्या मुझे यह पुष्प मिल सकता है?"

"भगवान शंकर ने अपने हाथों से काम्यक उपवन का निर्माण किया है। उपवन सुरक्षा के लिए वहां अनेक गण तैनात रहते हैं। वे गण तुम्हें पुष्प कैसे लेने देंगे?"—नारद जी ने अपनी आशंका व्यक्त की।

–"शंकर ने इस पुष्प की इतनी सुरक्षा क्यों की है?"

"मंदार साधारण पुष्प नहीं है। इसकी सुगंध का असर तो तुमने देख ही लिया है। इससे मनुष्य की मनोकामनाएं पूर्ण होती हैं।"—नारद जी ने कहा।

—"अच्छा! मैं इस फूल को प्राप्त करके ही रहूंगा। चाहे इसके लिए मुझे शंकर से युद्ध ही करना पड़े।"

नारद जी मुसकराते हुए देवलोक चले गए।

अंधक सेना सहित मंदार पर्वत की ओर चल दिया। वह पर्वत पर पहुंचा। देखते ही देखते उसने पर्वत को उखाड़ फेंका।

भगवान शंकर यह सब देख रहे थे। उन्होंने तुरंत पर्वत का दोबारा निर्माण कर दिया। अंधक ने उसे भी नष्ट कर दिया। शंकरजी ने फिर पर्वत को खड़ा कर दिया। अब अंधक बार-बार पर्वत को उखाड़ता और भगवान शंकर हर बार एक नया पर्वत बनाकर खड़ा कर देते। अंधक क्रोध से पागल हो गया। उसने पर्वत को ललकारते हुए कहा—"तुम मेरे साथ छल मत करो। अगर तुममें या तुम्हारे स्वामी में साहस है, तो मेरे सामने आकर युद्ध करो।"

अंधक की बात सुन भगवान शंकर हाथ में त्रिशूल लिए वहां उपस्थित हो गए। क्रोध से उनकी आंखें लाल थीं। अंधक शंकरजी को देख कांप गया। तभी उसे अपने पिता का आधा वचन याद आ गया। परंतु वह शंकर जी के हाथों मृत्यु वाली एक बात को भूल गया था। वह अहंकार में शंकरजी को ललकारने लगा—"तुम हो पर्वत के स्वामी! तुम मुझे मंदार पुष्प दे दो। वरना मैं तुम्हारा वध कर दूंगा।"

शंकरजी ने अपना त्रिशूल उठाया। अंधक की ओर फेंकते हुए बोले—"दुष्ट! मैं तेरे घमंड का अभी अंत करता हूं।"

त्रिशूल अंधक की छाती में लगा। वह दर्द से कराहता हुआ जमीन पर गिर पड़ा। कुछ देर में वह मर गया।

अंधक के मरने का समाचार देवताओं ने सुना, तो प्रसन्न हो, पुष्प वर्षा करने लगे।

(हरिवंश पुराण)

रहेंगे यहां तीन देव

—सुमित

ब्रह्माजी ने सृष्टि की रचना की। अभिमान ने आ घेरा। वह सभी देवताओं को अपने आगे कुछ न समझते। सभी देवता भगवान शिव की शरण में गए। शिवजी उन्हें आश्वस्त करते हुए बोले—"आप घबराएं नहीं, ब्रह्माजी का जो पांचवां मुख आकाश की ओर उठा हुआ है, मैं उसे काटकर, उनके अभिमान को खत्म कर दूंगा। वैसे भी वह सिर उन्हें बहुत तकलीफ देता है।"

देवता आश्वस्त होकर लौट गए। शिव ने वैसा ही किया, जैसा कहा था। ब्रह्माजी को चाहे वह सिर तकलीफ देता था, लेकिन फिर भी उन्हें उससे मोह था। उन्हें अपने सिर की दुर्दशा देखकर, अत्यंत क्रोध आया। उनके मस्तक पर पसीना आ गया। माथे के स्वेदज बिंदुओं को उन्होंने हाथ से झटककर नीचे फेंका। पसीने की बूंदों से एक धर्नुधर वीर उत्पन्न हो गया। वह स्वेदज वीर हाथ जोड़कर ब्रह्माजी से बोला—"मेरे लिए क्या आज्ञा है प्रभो!"

ब्रह्माजी बोले—"जाओ, शिव का संहार करो।" वह शिवलोक की ओर बढ़ गया।

शिवजी ने ज्योंही एक धर्नुधारी तेजस्वी बालक को अपनी ओर आते देखा, वह सब समझ गए। प्राणरक्षा के लिए विष्णुजी की शरण में भागे। विष्णुजी अपनी धुन में बैठे हुए थे। शिवजी ने पास जाकर कमंडल आगे कर दिया। विष्णुजी ने अपनी भुजा से उसमें रक्त टपका दिया। शिवजी ने एक नजर कमंडल पर डाली। एक धर्नुधारी उसमें से उत्पन्न हो गया। तब विष्णु का ध्यान उस ओर गया। वह बोले—"अरे,यह 'नर' कौन है ?" शिवजी ने विष्णु के मुख से 'नर' शब्द सुना और उसका नाम नर ही रख दिया। बोले—"यह नर है जो ब्रह्माजी के दीप्त तेज से,आपकी भुजा के रक्त से और मेरे दृष्टिपात से उत्पन्न हुआ है। यह युद्ध में सदैव शत्रु-विजेता होगा।" यह कहकर शिवजी ने सारी बात विष्णु को बता दी।

सारी बात सुनकर विष्णुजी उस रक्तज 'नर' से बोले—"जाओ वत्स, जाकर स्वेदज का सं.हा करो। हम तुम्हारे साथ हैं।"

विष्णुजी का आदेश पाकर, रक्तज चल पड़ा स्वेदज से युद्ध करने। युद्ध करते हुए दोनों एक-दूसरे पर भारी पड़ रहे थे। काफी समय तक युद्ध होता रहा। अन्ततः विष्णुजी के बल से रक्तज ने स्वेदज को मार गिराया। लौटकर विष्णुजी से बोला—"प्रभो, मैंने आपका आदेश पूरा कर दिया है।"

विष्णुजी ने तुरंत ब्रह्मा को सूचना भिजवाई कि स्वेदज मारा गया है। ब्रह्माजी को बहुत आघात पहुंचा। वह मनुष्य तो पैदा कर सकते थे, लेकिन उसे फिर से जीवित नहीं कर सकते थे। यह कार्य तो केवल विष्णुजी ही कर सकते थे।

वह भागे-भागे विष्णुजी के पास गए। अनुरोध करने लगे—"मेरे पुत्र को जीवित कर दो।" विष्णुजी समझ गए, ब्रह्माजी का अभिमान उड़न-छू हो चुका

है। उन्होंने स्वेदज को फिर जीवित कर दिया। ब्रह्माजी से बोले—"महासंग्राम में इन दोनों का फिर भयंकर युद्ध होगा।" ब्रह्माजी स्वेदज को जीवित पाकर अपने लोक लौट गए।

इसके उपरांत विष्णुजी ने सूर्य और इंद्र को बुलवाया। सूर्य को उन्होंने स्वेदज सौंप दिया और इंद्र को रक्तज। सूर्य से बोले—"आप इसका पुत्रवत पालन करो। द्वापर में दुर्वासा ऋषि कुंती की सेवा-भावना से प्रसन्न होकर, उसे देवताओं को आमंत्रित करने का वरदान देंगे। तब कुंती तुम्हें बुलाएगी। तुम स्वेदज को उसे दे देना। वह इसे कर्ण रूप में जन्म देगी।" इंद्र से विष्णु बोले—"विवाहिता कुंती को तुम रक्तज दे देना। वह इसे अर्जुन के रूप में जन्म देगी।"

यह सब बताने के बाद विष्णुजी ने उन दोनों बालकों को ले जाने के लिए कहा। सूर्य तो चुपचाप स्वेदज को लेकर चले गए। परंतु इंद्र दुविधा में पड़े वहीं खड़े रहे। विष्णुजी बोले—"इंद्र, क्या तुम्हें रक्तज को पालने में कोई आपत्ति है?"

"जी प्रभु।"—इंद्र बोले।

"क्या?"—विष्णुजी बोल उठे।

"प्रभो, जब आपने राम अवतार लिया था, तब आपने मेरे पुत्र बलि का वध कर दिया था। मुझे डर है कि अब फिर से कहीं मेरे इस पालित पुत्र का भी वध न हो जाए। पुत्र चाहे पाला हुआ भी क्यों न हो, उसके वध से माता-पिता को बहुत तकलीफ पहुंचती है।"—इंद्र झिझकते हुए बोले।

"देवराज, आप तनिक भी घबराइए मत।"—विष्णुजी बोले—"इस बार सूर्य पुत्र के विनाश के लिए और आपके पुत्र की रक्षा के लिए हम स्वयं अवतार लेंगे। हम अर्जुन के सहायक बनकर उसके संग-संग रहेंगे।"

यह सुनकर इंद्र प्रसन्न हो गए। बालक को लेकर चले गए। भगवान विष्णु और शिव भी अपने-अपने लोक चले गए। कुछ दिनों बाद शिवजी का शरीर काला पड़ गया। उसमें दुर्गंध आने लगी। शिवजी घबराए। विष्णुजी के पास पहुंचे। बोले—"प्रभो, देखिए यह मेरी कैसी हालत हो रही है?"

विष्णुजी बोले—"शिवजी, आपने ब्रह्महत्या की है। उसका दोष आ गया है।"

"इसका कोई उपाय बताइए प्रभो!"—शिवजी बोले।

"आप पुष्कर में जाकर स्नान करिए। ब्रह्माजी यदि आपकी तपस्या से खुश हो गए, तो आप से इस ब्रह्महत्या का दोष हट जाएगा।"—विष्णुजी ने शिवजी को समझाया।

शिवजी ने विष्णुजी की आज्ञा का पालन किया। उनके तप से ब्रह्माजी प्रसन्न हो गए। उन्होंने शिवजी को दोषमुक्त कर दिया। काशी उन्हें लौटाते हुए बोले—"यह स्थान 'कपालमोचन' नामक प्रसिद्ध तीर्थ होगा। यहां आकर ब्रह्मा, विष्णु, महेश के दर्शन करने वाला महापातकी भी पवित्र हो जाएगा।"

दोष से मुक्त होते ही शिवजी के शरीर से भीनी-भीनी सुगंध आने लगी। उन्होंने काशी को अपना निवास-स्थान बना लिया और वहीं रहने लगे। ●
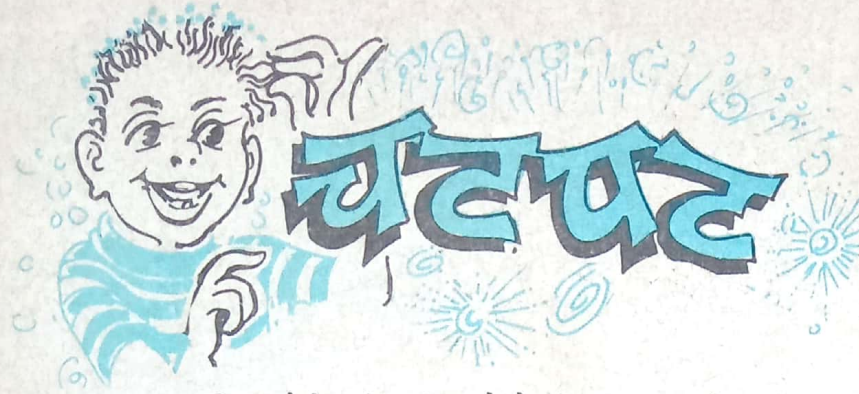
□कवि—मेरी कविताएं सुनने के लिए पशु-पक्षी यहां तक कि पेड़-पौधे भी शांत हो जाते हैं।
श्रोता—तो आप उनको ही कविताएं सुनाइए।

□ पति—मैं कल मिठाई का डिब्बा लाया था। मिठाई रखी है, पर डिब्बा गायब है।
पत्नी—अब मैं समझी कि तुम खराब मिठाई लाए थे। वरना अपना टामी मिठाई छोड़, डिब्बा क्यों ले जाता ?

□ रिक्शा वाला—साहब, बड़ी गरमी है। स्टेशन तक के पांच रुपए लगेंगे।
सवारी—ऐसा करो, एक गिलास ठंडा पानी पी लो। गरमी शांत हो जाएगी। दो रुपए में स्टेशन पहुंचा देना।

□ अध्यापक—सोहन, तुमने कापी में इतने मोटे-मोटे अक्षर क्यों लिखे हैं?
सोहन—क्योंकि कल आप अपना चश्मा ठीक कराने की बात कर रहे थे।

□ कमल—कई बार तो अच्छे-अच्छों का भी दिमाग चकरा जाता है।
विमल—तुम ठीक कहते हो। तभी तो तुम्हें इस बार गणित में मुझसे अधिक नम्बर मिले हैं।

□ एक गप्पी—तुम बेकार में आफत मोल न लिया करो। कुछ गड़बड़ हो जाए तो...
दूसरा गप्पी—मैं इतना पागल नहीं कि आफ़त मोल में लूं। जब वह मुफ़्त में मिलती है, तभी लेता हूं। वरना रास्ता छोड़कर बगल से निकल जाता हूं।

□ एक आदमी—भाई, आज रविवार है। इसलिए मैं तुमसे लड़ना नहीं चाहता।
दूसरा आदमी—तुम चिंता न करो, मैं डाक्टर हूं। मेरी क्लिनिक रोज खुलती है।

□ दारोगा—जब जेबकतरा इनकी जेब से पैसे निकाल रहा था, तब तुमने उसे पकड़ा क्यों नहीं ?
गवाह—साहब, पकड़ता कैसे ? मैंने दोनों हाथों को अपनी जेबों में डाल रखा था। मुझे डर था कि कोई दूसरा जेबकतरा मेरे रुपए न निकाल ले।

□ मां—बेटा, बिल्ली ने सारी मलाई सफाचट कर दी।
बेटा—हो सकता है मां, क्योंकि आज मैं घर देरी से पहुंचा हूं।

□ मोहन—तुम मेरी बिल्ली को कुछ मत कहना। बहुत सीधी है।
सोहन—और तुम मेरे कुत्ते को न टोकना। आजकल वह बहुत सीधा हो गया है।

□ एक आदमी—तुम्हारी बात में कोई दम नहीं है।
दूसरा आदमी—दम तो है, पर तुम्हारे पास वह तराजू नहीं है जिससे तुम मेरी बात तोल सको।

□ एक मित्र—आज तुम्हारा कुत्ता बहुत शांत बैठा है ?
दूसरा मित्र—हां, क्योंकि अभी तक कोई मेहमान आया नहीं है। यह मेहमान के आते ही भौंकने लगता है।

□ अध्यापक—सोहन, तुम स्कूल में क्यों आते हो ?
सोहन—मम्मी की डांट से बचने के लिए।

□ एक सहेली—अरे, रेस्टोरेंट चलने के लिए आज तो तुम एकदम तैयार हो गईं।
दूसरी सहेली—हां, क्योंकि मैंने तुम्हारा पर्स देख लिया है। उसमें पचास-पचास के कई नोट रखे हैं।

□ दरोगा—एक तो चोरी करते हो, ऊपर से झूठ बोलते हो। सच-सच बताओ, कहां-कहां चोरियां की हैं तुमने ?
चोर—मैं सच कह रहा हूं कि आज मैं चोरी करने से पहले ही पकड़ा गया। वरना मुझे बताने में इतनी देर थोड़े ही लगती।

□ अजय—विजय, तुम्हारे रहते मैं परीक्षा में फेल नहीं हो सकता।
विजय—पर इस बार फेल हो सकते हो, क्योंकि इस बार हम दोनों अलग-अलग कमरे में बैठेंगे। ●

तेनालीराम ३१३

दरबार में झपकी

१. गर्मियों के दिन थे। लूएं चलने लगी थीं। विजयनगर के दरबार भवन में चारों ओर खस के पर्दे लटकवा दिए गए। बड़े बड़े पंखे लगवा दिए गए। जब तक दरबार चलता, सेवक खस के पर्दों पर जल छिड़कते रहते। पंखे खींचते रहते। फिर भी दरबारी पसीनों में नहाए रहते। किसी में यह साहस न था कि कोई इस बारे में कुछ कहता।

२. एक दिन राजा कृष्णदेव राय दरबार में आए, तो गर्मी से बेचैन थे। आते ही बोले—"इस बार तो गर्मी ने हद कर दी। मेरा तो सारा बदन तप रहा है। आप कुछ करें, कुछ हल बताएं।"

सुनते ही तुरंत दरबारी दौड़-भाग करने लगे। कोई शरबत लेने दौड़ा। किसी ने पंखे पर गुलाब जल छिड़का। किसी ने राजा से भारी वस्त्र उतारने की प्रार्थना की। उनमें होड़-सी लग गई, राजा को सुख पहुंचाने की।

३. अचानक मंत्री की नजर खम्बे के सहारे बैठे तेनालीराम पर पड़ी। वह झपकी ले रहा था। तुरंत उसने राजा के कान भरे—"महाराज, आप इस कदर परेशान हैं और वह देखिए, मजे से सो रहा है।"

कुछ दरबारियों ने हां में हां मिलाते हुए कहा—"तेनालीराम को महाराज की परेशानी से क्या लेना-देना।"

४. राजा ने तुरंत तेनालीराम को आवाज दे, अपने पास बुलाया। बोले—"हम सब परेशान हैं और तुम झपकी ले रहे हो! दरबार क्या सोने की जगह है?"

"नहीं अन्नदाता!"—तेनालीराम तुरंत हाथ जोड़कर बोला—"मैं तो गर्मी की परेशानी से बचने के लिए ऐसा कर रहा था। सो जाने पर कौन है, जिसे मौसम परेशान कर सके?"

राजा और सारे दरबारी मुसकरा उठे।

ZAP B
MICKEY AN
TO T
© DISNEY
YES! Zap now has a whole new range of
fun watches-the Disney series.
Lovable Mickey. Bashful Minnie. Crafty
Donald. Perky Daisy. Bumbling Goofy.
Clumsy Pluto. And of course,
Ol' Unca Scrooge.
Disney series: MRP Rs. 150/-
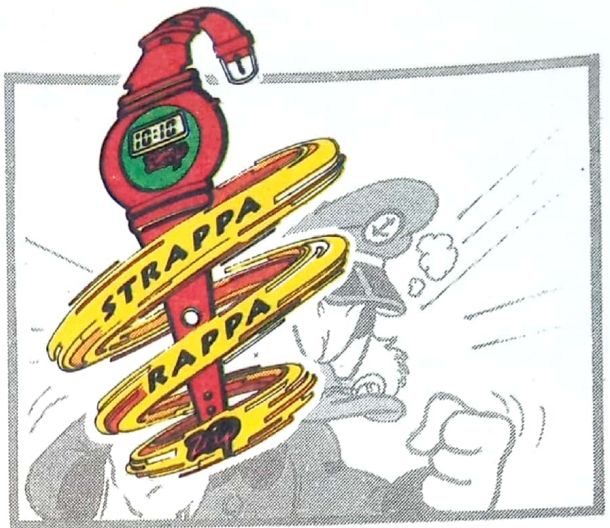
RINGS
O THE GANG
OWN.
STRAPPA
RAPPA
So many whacky watches,
so much zany fun... yours at the flick
of a wrist.
Start collecting today!
IA'S FIRST WATCH
GNED FOR CHILDREN
Zap
FROM
hmt
Rediffusion/BLR/HMT/40/93

वह शक्ति जिसने राजू को बनाया

कॅमल चैम्प

प्यारे दोस्तो,

मेरा दोस्त बंटी बड़ी अकड़ दिखाता था कि उसके विदेशी क्रेयॉन मेरे कॅमल क्रेयोना वैक्स क्रेयॉन्स से ज्यादा चटकीले और रंगीले हैं. तभी तो, वो एक दिन मुझे चैलेंज कर बैठा ड्रॉइंग के मुकाबले के लिए. जानते हो, तब मैंने क्या बनाया? हां, उड़ते पक्षी, बहती नदी, नाव और सुनहरा दिन... और सब कुछ अपने कॅमल क्रेयोना वैक्स क्रेयॉन्स की रंगीली शक्ति से. मेरी ड्रॉइंग इतनी खूबसूरत बनी कि बंटी के तो होश उड़ गये. और फिर उसने कभी अपने विदेशी क्रेयॉन की डींग नहीं मारी. अब सच कहूं, तो मेरे प्यारे कॅमल क्रेयोना वैक्स क्रेयॉन्स ने ही मुझे जिताया और बनाया है कॅमल चैम्प.

तुम्हारा दोस्त,

राजू

कॅमल

विजेता रंग अपनाओ. कॅमल चैम्प बन जाओ.

कॅम्लिन लिमिटेड, आर्ट मटीरियल डिवीज़न, जे बी नगर, अंधेरी (पूर्व)...
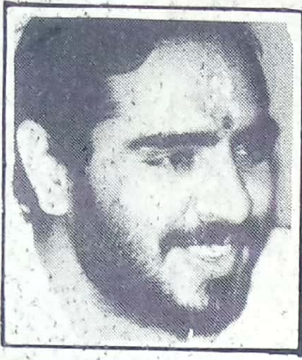
पेड़ बने

— रमेश भाई ओझा

कुबेर के दो पुत्र थे — मणिग्रीव और नलकूबर।

दोनों कुसंग में पड़कर दिन भर पाप कर्म करने लगे। कुबेर जी ने उन्हें बहुत समझाने की कोशिश की, किंतु वे नहीं माने।

एक दिन दोनों कुबेर-पुत्र यमुना के पावन जल में निर्वस्त्र होकर क्रीड़ा कर रहे थे। देवताओं ने उन्हें रोकने की कोशिश की, तो वे उनका अपमान करने पर उतारू हो गए। देर तक जल में वे शरारत करते रहे। स्नान करने आई युवतियां भी उनकी शरारत देखकर वहां से चली गईं।

देवर्षि नारद जी उधर से गुजरे, तो उन्होंने भी यह दृश्य देखा। नारद जी ने उन्हें पहचान लिया। कहा — "तुम कुबेर-पुत्र होकर भी यमुना जी का अपमान कर रहे हो। यह बात तुम्हें शोभा नहीं देती।"

दोनों धन के नशे में इतने धुत्त थे कि उन्होंने देवर्षि का भी अपमान कर डाला। देवर्षि ने उन्हें फिर समझाया — "तुम उन कुबेर के पुत्र हो जो लोकपाल हैं तथा भगवान शिव के सखा हैं। तुम्हें ऐसा व्यवहार नहीं करना चाहिए।"

ये शब्द सुनने के बाद भी दोनों जल में हुड़दंग मचाते रहे। कुछ देर बाद वे जल से बाहर आए और देवर्षि के सामने खड़े हो गए।

देवर्षि ने अपने क्रोध पर काबू किया तथा उन्हें शाप दे डाला — "तुम जिस तरह खड़े हो, उसी तरह जड़वत अर्जुन वृक्ष बने खड़े रहोगे। जब प्रायश्चित की अवधि पूरी हो जाएगी, तब बाल कृष्ण तुम्हारा उद्धार करेंगे।"

कुबेर जी को जब अपने पुत्रों की शरारत और देवर्षि नारद जी द्वारा दिए शाप का पता चला, तो वह चिंतित हो उठे। वह ब्रह्मा के पास पहुंचे तथा उनसे प्रार्थना की कि किसी तरह देवर्षि से कहकर, उनके पुत्रों को शाप से मुक्ति दिलाएं।

ब्रह्मा जी ने कुबेर जी से कहा — "देवर्षि ने तो आपके दोनों कुमार्गी पुत्रों पर दया करके उन्हें बाल कृष्ण के दर्शन का मार्ग ही बताया है। आपको तो देवर्षि का आभारी होना चाहिए।"

देवर्षि के शाप के बाद कुबेर के दोनों पुत्र नंद गांव में नंद बाबा के मकान में अर्जुन के वृक्ष बन गए।

देवर्षि की भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हुई। मथुरा के कारागार से देवकी पुत्र बाल कृष्ण को चुपके से लाकर माता यशोदा को दिया गया। मां यशोदा के घर में कृष्ण ने बाल लीलाएं कीं।

एक दिन माखन-चोरी की शिकायत पर बाल कृष्ण को यशोदा ने ऊखल से बांध दिया। बाल कृष्ण ऊखल से बंधे, घिसटते-घिसटते अर्जुन के उन दोनों वृक्षों के पास पहुंचे। उनके एक ही झटके से दोनों वृक्ष उखड़कर जमीन पर आ गिरे।

यशोदा ने वृक्ष उखड़ने की आवाज सुनी, तो भागी-भागी कृष्ण के पास पहुंचीं। उन्हें वृक्षों की जगह दो सुंदर युवक दिखाई दिए, जो बाल कृष्ण को हाथ जोड़े खड़े थे। देवर्षि नारद जी के दया भरे शाप से दोनों कुबेर-पुत्रों की अब मुक्ति हो गई थी।

(श्रीमद् भागवत)

जल में फेंका

—स्वामी कल्याणदेव

अयोध्या के राजा सगर बहुत न्यायप्रिय शासक थे। उनके राज्य में मनुष्य तो क्या, पशु-पक्षी भी निर्भय होकर रहते थे।

एक दिन राजा सगर पूजा-पाठ और यज्ञ पूरा करने के बाद राजसभा में पहुंचे। वह सिंहासन पर बैठकर मंत्रियों से राज-काज के बारे में सलाह कर रहे थे।

तभी द्वारपाल महाराजा सगर के सिंहासन के पास पहुंचा। बोला —"महाराज, मुख्य द्वार पर कुछ लोग खड़े हैं। वे आपसे मिलने का आग्रह कर रहे हैं।"

महाराजा ने कहा —"उन्हें सम्मानपूर्वक राजदरबार में ले आओ।"

कुछ ही क्षणों में अयोध्या के कुछ नागरिक उनके सामने थे। सभी ने सिर झुकाकर महाराजा का अभिवादन किया और एक ओर खड़े हो गए।

"आप लोग निस्संकोच बैठ जाइए। मैं स्वयं प्रजा के प्रतिनिधियों से मिलने को इच्छुक हूं।"—राजा सगर ने विनम्रता पूर्वक कहा।

सभी आसनों पर बैठ गए।

राजा सगर ने दरबारियों को वहां से चले जाने का आदेश दिया। एकांत पाकर नागरिकों में से एक खड़ा हुआ। हाथ जोड़कर बोला —"महाराज, आप बहुत न्यायप्रिय हैं, यह सारा संसार जानता है। किंतु यदि अन्याय राज परिवार के किसी सदस्य के हाथों हो, तो क्या उसे भी उसका दंड मिलेगा?"

ये शब्द सुनते ही राजा सगर सिंहासन से खड़े हो गए। वह बोले —"प्रजा राजा के लिए सगे पुत्र से बढ़कर है। यदि मेरे पुत्र ने भी कोई अन्याय किया होगा, तो उसे अवश्य दंड मिलेगा। न्याय के क्षेत्र में न कोई छोटा-बड़ा होता है, न पराया और अपना। सभी बराबर के दंड के अधिकारी होते हैं।"

नागरिक राजा सगर की बातों से प्रभावित थे, किंतु वे अपने मुख से कुछ कहने में हिचकिचा रहे थे।

"यदि आपको मेरे पुत्र के बारे में भी कुछ शिकायत है, तो संकोच न करें। उसे भी साधारण नागरिक की तरह अपराध की सजा दी जाएगी।"—राजा सगर ने नागरिकों को फिर दिलासा दिया।

अब नागरिकों में साहस आया। उन्होंने हाथ जोड़कर कहा—"महाराज, आपके पुत्र राजकुमार असमंजस प्रतिदिन सरयू तट पर शिकार खेलने जाते हैं। वह निरीह पशु-पक्षियों के प्राण लेते हैं। साथ ही उन्हें जो भी छोटा बालक वहां खेलता मिलता है, उसे उठाकर सरयू में फेंककर मनोरंजन करते हैं।"

महाराजा सगर ने राजकुमार के बारे में यह सुना, तो उनका सिर शर्म से झुक गया। उनकी आंखें डबडबा आईं।

"अब मेरे राज्य में ऐसा घोर पाप कभी नहीं हो पाएगा।"—यह कहकर राजा सगर ने नागरिकों को विदा कर दिया।

राजा सिंहासन से खड़े हुए तथा राज महल में पहुंचे। उन्होंने राजकुमार असमंजस को अपने पास बुलाया।

राजा ने पूछा—"असमंजस, क्या तुम प्रतिदिन शिकार खेलने जाते हो? जो भी बालक वहां मिलता है, उसे सरयू में फेंककर अपना मनोरंजन करते हो?"

असमंजस का सिर झुक गया।

"क्या शिकार के नाम पर निरीह जीव-जंतुओं की हत्या तथा मनोरंजन के नाम पर अबोध बालकों को जल में फेंक देने से बढ़कर कोई दूसरा पाप हो सकता है?"—महाराजा सगर गरज उठे।

उन्होंने आदेश दिया—"असमंजस, तुम सूर्यवंश के कलंक हो। इसी समय मेरे राज्य की सीमा से बाहर निकल जाओ।" और रथ में बिठाकर असमंजस को सीमा से बाहर भेज दिया गया।

(स्कन्द पुराण)

वे तीन नगर

—सुरेंद्र त्रिपाठी 'सुमन'

वाराणसी नगरी में देवदत्त नाम का एक राजा राज्य करता था। उसके राजकोष में अथाह धन था। राज्य में धन-वैभव आदि किसी भी चीज की कोई कमी न थी। सैकड़ों दास-दासियां, सुंदर राजकुमार, गुणवती रानी, बुद्धिमान मंत्री तथा विशाल सेना, सभी कुछ था उसके पास। मन में वह जो भी इच्छा कर लेता, पूरी हो जाती थी। फिर भी उसे संतोष न था। उसकी इच्छाएं असीमित थीं।

इसी कारण देवदत्त ने दूर-दूर तक कई राज्यों पर चढ़ाई की तथा एक-एक करके सबको जीतता गया। फिर भी उसका मन अशांत था। वह और अधिक से अधिक राज्यों को लूटना चाहता था।

एक दिन एक तेजस्वी साधु राजा के महल में पधारे। उनके चेहरे से प्रचंड ज्योति फूट रही थी। इतने तेजवान साधु को देखकर देवदत्त हैरान रह गया। वह अपने मंत्रियों तथा रानी सहित स्वयं उनकी आवभगत में जुट गया।

भोजन इत्यादि के बाद साधु ने राजा को एकांत में पाकर कहा—''राजन्, मैं ऐसे तीन नगरों को देखकर आया हूं जहां वैभव ही वैभव है। प्रचुर धन-भंडार, अनंत सम्पत्ति वाले इतने वैभवशाली नगर मैंने तो इससे पहले कभी नहीं देखे। आप जल्दी से उन नगरों को जीत लीजिए तथा अपने अथाह राजकोष में और वृद्धि कीजिए।''

इतना सुनते ही राजा लोभ से अंधा हो गया। उसे किसी बात का ध्यान ही न रहा। मन ही मन वह उन नगरों पर चढ़ाई करने की योजनाएं बनाने लगा। उसे पता ही न चला कि साधु महाराज कब वहां से उठकर महल के बाहर चले गए हैं। जब उसका ध्यान टूटा, तो वह सोचने लगा—'मैंने साधु से उन नगरों का नाम-पता तो पूछा ही नहीं। कहां हैं वे नगर? कहां गए साधु महाराज?'
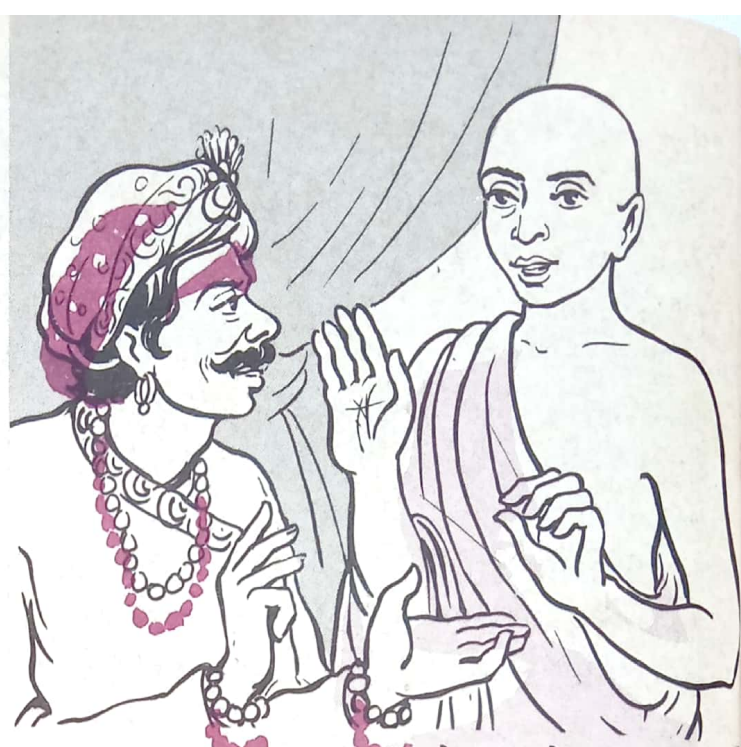
किंतु साधु अब वहां कहीं थे, वह तो गायब हो चुके थे। राजा 'हाय-हाय' करता अपने मंत्रियों से बोला—''आप और सैनिक चारों ओर तुरंत दौड़ जाएं। जहां भी साधु को देखें, तुरंत उन्हें मेरे सामने ले आइए।''

इतना सुनना था कि सैनिक व मंत्री चारों ओर दौड़ पड़े, किंतु साधु कहीं भी न दिखाई पड़े। अब तो राजा को बहुत दुःख हुआ। वह उदास होकर कहने लगा—''हाय-हाय, मुझ जैसा मूर्ख कौन होगा! मैंने साधु से उन नगरों का नाम -पता कुछ भी तो नहीं पूछा। इतने वैभवशाली वे तीन नगर कहां हैं? मैं उन्हें कहां ढूंढूं और चढ़ाई कर दूं?''

उन नगरों की याद कर, राजा रह-रहकर स्वयं को व मंत्रियों को कोसता। धीरे-धीरे उसकी हालत काफी बिगड़ गई। नींद, भूख-प्यास भूलकर वह हर समय बड़बड़ाता रहता। आखिर वह बीमार पड़ गया।

दूर-दूर से वैद्यों को बुलाकर उसका इलाज करवाया गया, किंतु उसकी हालत में सुधार होने के बजाए वह और बीमार हो गया। रात को वह उठकर बैठ जाता तथा 'हाय मेरे तीनों नगर...हाय मैं उन्हें कहां ढूंढूं?' रटते-रटते मूर्च्छित हो जाता। उसकी लगातार बिगड़ती हालत को देखकर, रानी व मंत्री सभी परेशान थे।

एक दिन बोधिसत्व उस नगर में पधारे। पूरी बात

बताकर मंत्री ने उनसे महल में आकर राजा देवदत्त को ठीक करने की प्रार्थना की। बोधिसत्व ने तुरंत मंत्री के साथ महल की ओर चलना स्वीकार कर लिया। वहां पहुंचकर वह सीधे राजा के कक्ष में गए। राजा मरणासन्न अवस्था में पलंग पर लेटा हुआ बड़बड़ा रहा था—"हाय, मेरे तीन वैभवशाली नगर! हाय, मैं तो बरबाद हो गया। अब मैं जीवित नहीं बचूंगा, कोई मेरी सहायता करो।"

बोधिसत्व धैर्य पूर्वक राजा के पास बैठ गए। बड़े प्रेम से बोले—"राजन, आपको क्या हुआ? किस कारण आप जैसा धैर्यवान और शक्तिशाली राजा इतना दुखी है? आप अपनी बात मुझसे खुलकर कहिए।"

देवदत्त ने पीड़ा से कराहते हुए पूरी बात कह सुनाई। बोधिसत्व बोले—"राजन, क्या इस तरह व्यर्थ की चिंता करने से आप उन नगरों को पा लेंगे?"

राजा चिढ़कर बोला—"अगर आप कहीं से उस साधु को ढूंढ़कर ला सकें, तो ले आइए,अन्यथा मुझे परेशान मत कीजिए।"

बोधिसत्व गम्भीर हो गए। बोले—"तुम व्यर्थ की चिंता कर रहे हो? जो तुम्हारे पास नहीं है, उसकी कामना क्यों कर रहे हो? इतना धन-वैभव, इतनी सम्पत्ति तो है तुम्हारे पास। पहले इसका तो ठीक से उपयोग कर लो। यह भी तो हो सकता है कि किसी कपटी साधु ने तुमसे झूठ-मूठ ही कह दिया हो और वास्तव में वे नगर इस पृथ्वी पर हों ही नहीं! तुम्हारी हालत लगातार बिगड़ रही है। अगर तुम मृत्यु को प्राप्त हो गए, तो तुम्हारी सम्पत्ति से क्या फायदा? राजकुमारों व रानी की रक्षा कौन करेगा?"

राजा कई दिनों बाद स्वस्थ होकर राज दरबार में आया, तो उसके कान में बोधिसत्व के वचन गूंज रहे थे—'राजा, तुमने अभी तक लिया है। लूटने का आनंद प्राप्त किया है। एक बार साफ हृदय से दीन-दुखियों के लिए स्वयं को लुटाकर देखो, कितना आनंद आएगा।'

(जातक)

सही पाठ

— हरिहरस्वरूप विनोद

एक बार ब्रह्मा जी अपने जन्मदिन पर अपने द्वारा बनाई गई सृष्टि के बारे में सोच रहे थे। उन्हें लग रहा था कि उन्होंने सृष्टि का विस्तार करके भूल की है। पशु तो आपस में लड़ते ही थे, देव और असुर भी इससे मुक्त नहीं थे। कई बार तो सुर और असुरों का युद्ध बहुत ही भयंकर होता था। वह इसी सोच में रहते थे कि किस प्रकार इन लोगों को सही पाठ पढ़ाया जाए।

एक बार की बात है कि ब्रह्माजी भगवान विष्णु का ध्यान कर रहे थे। उनका जन्मदिन निकट आ रहा था। वह चाहते थे कि अपना जन्मदिन वह भगवान के चिंतन-भजन में मग्न होकर मनाएं। आखिर उनका जन्मदिन आया। वह प्रातःकाल उठकर भजन-पूजन करने लगे। भजन-पूजन के बाद वह बैठकर संसार के बारे में सोच रहे थे। तभी उन्हें लगा कि चारों ओर से जय-जयकार की ध्वनि आ रही है। उनके पुत्र नारद जी वीणा बजाते हुए और हरि नाम का गायन करते हुए आ पहुंचे।

ब्रह्माजी ने पूछा— "वत्स नारद, यह कोलाहल कैसा? किसका स्वर सुनाई पड़ रहा है? लोग इधर ही बढ़ते आ रहे हैं। ये कौन लोग हैं जो ब्रह्म लोक में धावा बोलने आ रहे हैं?"

नारद जी ने कहा— "पिता जी, क्या आपको पता नहीं कि आज आपका जन्म दिन है? जन्मदिन मनाने के लिए सुर, असुर, मानव और पशु योनि के जीव भारी संख्या में आ रहे हैं। वे आपकी जय-जयकार भी कर रहे हैं।"

ब्रह्माजी ने नारद की बात सुनी, तो सोच में पड़ गए— 'अब क्या किया जाए? ये लोग तो शांत वातावरण को अशांत करने आ रहे हैं। ऐसे कोलाहल में मैं भगवान का चिंतन भी नहीं कर सकता।'

उन्होंने नारद से कहा— "वीणापाणि, इन लोगों को रोको। समझाओ, सबको यहां मत आने दो। यदि

ये सभी लोग यहां आ गए तो ब्रह्म-लोक की शांति भंग हो जाएगी।

"और सुनो, पशु योनि के जीवों से कहो कि वे जाएं। हम उन पर बहुत प्रसन्न हैं। वे जहां चाहें रहें और आनंद मनाएं। सुर, असुर और मानव बुद्धिमान हैं, अच्छा-बुरा समझते हैं, इसलिए उनके पांच-पांच लोगों को बुला लो। हां, नारद, एक बात का ध्यान रखना कि सभी लोग एक साथ न आएं। अगर सभी के प्रतिनिधि एक साथ आ गए तो परस्पर झगड़ने लगेंगे। सबसे पहले सुर समुदाय का प्रतिनिधि आना चाहिए। वे जब चले जाएं, तो असुरों के प्रतिनिधि को आने देना। सबके बाद मनुष्यों के प्रतिनिधि से मिलूंगा।"

नारद जी ने कहा— "पिता जी, ऐसा ही होगा।"

सबसे पहले देवताओं के प्रतिनिधि ब्रह्माजी के पास गए। कहा— "प्रजावत्सल, आज आपका जन्मदिन है। हम स देवता आपको बधाई देने आए हैं। आपसे प्रार्थना है कि हमें कुछ ऐसा उपदेश दें जिससे हमारा जीवन धन्य हो।" ब्रह्माजी ने सुना और आंख बंद करके कुछ सोचा। उसके बाद कहा "जाओ 'द' मय जीवन बिताओ।"

इसके बाद असुरों की बारी आई। असुरों ने भी ब्रह्माजी का गुणगान किया। कहा— "हमें भी कुछ ऐसा आशीर्वाद दें कि हमारा कुल उन्नति करे। हम लोग सुख से रहें।" ब्रह्माजी ने उन्हें भी 'द' की सीख

दी।

अब मानवों की बारी थी। नारद जी ने मानवों के प्रतिनिधि से कहा— "जाओ और ब्रह्माजी से तुम लोग भी आशीर्वाद ले लो।" मुनष्यों का प्रतिनिधि मंडल भी ब्रह्माजी के सम्मुख उपस्थित हुआ। प्रार्थना की, उनका भी कुछ इस प्रकार मार्गदर्शन किया जाए कि धरती पर मानव प्रसन्नता पूर्वक रह सकें। ब्रह्माजी ने इन्हें भी 'द' कहकर विदा किया।

ब्रह्म लोक से सुर, असुर और मानव 'द' शब्द का आशीर्वाद लेकर आए, लेकिन उनकी समझ में न आया कि ब्रह्माजी ने सभी को 'द' का ही आशीर्वाद क्यों दिया ? बल दे सकते थे, बुद्धि का आशीर्वाद दे सकते थे और संगठित रहकर जीवन बिताने की समझ दे सकते थे। वे सब यह सोच ही रहे थे कि नारद जी वहां आ पहुंचे। सब लोगों ने अपनी शंका नारद जी के सामने रखी। कहा— "भगवन, अब हमें क्या करना चाहिए ?"

नारद जी ने देवताओं से कहा— "परमात्मा ने तुम्हें योग्य बनाया है। सब प्रकार का सुख तुम्हें दिया है, इसलिए दर्प छोड़ो, अभिमान न करो।"

जब असुरों ने पूछा कि भगवन हमारे लिए क्या आज्ञा है, तब नारद जी ने कहा— "तुम लोगों में बल है। तुमने विज्ञान का सहारा लेकर प्रकृति पर विजय प्राप्त की है, इसलिए तुम लोगों के लिए 'द' का अर्थ दया है। किसी को व्यर्थ न सताना। सब पर दया करना, सब को फलने-फूलने का अवसर देना।"

अब बारी मनुष्यों की आई। उन्हें नारद जी ने कहा— "ब्रह्माजी का कहना है कि तुम लोग दानमय जीवन बिताओ। जो कुछ अर्जित करो, उसमें से दसवां भाग किसी निर्धन, अपाहिज या समाज के उपेक्षित लोगों के लिए निकाल दो। अगर तुम्हारे पास पैसा है, बल है, तो लोगों की भलाई के लिए तालाब खुदवाओ। धर्मशाला बनवाओ, जहां पथिक विश्राम कर सकें।"

इस प्रकार ब्रह्मा जी ने देव, असुर और मानव सभी को 'द' का वरदान देकर अपना जन्म दिन मनाया।

(नारद पुराण)

मिल गए वेद

—उपासना

दुर्गम नाम का एक दैत्य था। अन्य दैत्यों की भांति वह भी देवताओं पर विजय प्राप्त करना चाहता था।

उसने सोचा—'देवताओं को युद्ध में हराना सम्भव नहीं है। उनके पास अनेक दिव्य शक्तियां हैं। कुछ ऐसा करूं जिससे उनकी शक्तियां क्षीण हो जाएं और वे आसानी से पराजित हो सकें।'

तभी उसके मन में विचार आया—'देवताओं की असली शक्ति तो वेद हैं। क्यों न उन्हें लुप्त कर दूं? वेदों के लुप्त हो जाने से देवता कमजोर हो जाएंगे। तब उन्हें हराना आसान हो जाएगा।'

वेदों के अधिष्ठाता ब्रह्माजी को प्रसन्न करने के लिए वह हिमालय पर तपस्या करने गया। एक हजार वर्षों तक उसने कठिन तपस्या की। अन्न-जल त्यागकर वह केवल वायु के सहारे रहा।

दुर्गम की कठोर तपस्या से ब्रह्माजी अत्यंत प्रसन्न हुए। उसे वर देने की इच्छा से वह हंस पर बैठकर उसके पास पधारे।

उस समय दुर्गम समाधि लगाए था। उसकी आंखें मुंदी हुई थीं। ब्रह्माजी ने उससे प्रेमपूर्वक कहा—"वत्स! मैं तुम्हारी तपस्या से प्रसन्न हूं। तुम जो वर मांगना चाहो, मांग लो।"

ब्रह्माजी का आश्वासन पा, वह झट से बोला—" हे पितामह! मुझे सम्पूर्ण वेद देने की कृपा कीजिए। साथ ही मुझे इतना बल दीजिए कि मैं देवताओं को परास्त कर सकूं।"

उसकी ऐसी इच्छा जानकार पहले तो ब्रह्माजी सकपकाए। परन्तु वह वचनबद्ध थे। अतः न चाहते हुए भी वह बोले—"तुम्हारी इच्छा पूर्ण हो।"—ऐसा कहकर वह अपने लोक को चले गए।

तबसे ब्राह्मण वेद भूलने लगे। सारे भूमंडल में हाहाकार मच गया।

ब्राह्मण सोचने लगे—'हमारी स्नान, संध्या, नित्य नियम, श्राद्ध, यज्ञ और जप आदि वैदिक क्रियाएं

क्यों नष्ट हो रही हैं?'

उधर देवताओं को हवि का भाग मिलना बंद हो गया, जिससे उनकी शक्तियां क्षीण होने लगीं। जिनके पास बुढ़ापा नहीं आ सकता था, उन्हें बुढ़ापे ने घेर लिया। वे कमजोर हो गए।

वे आपस में आश्चर्यपूर्वक कहने लगे—"यह क्या हो गया? अब वेदों के अभाव में हम क्या करेंगे?"

देवताओं की स्थिति देखकर दुर्गम ने सोचा—'यही मौका है देवताओं पर चढ़ाई करने का।' ऐसा सोचकर उसने अमरावती को घेर लिया।

देवता घबरा गए। विचार-विमर्श करने लगे—'इसका तो शरीर वज्र के समान कठोर है। हम इतने कमजोर हो गए हैं कि हम सब मिलकर भी इसका सामना नहीं कर सकते। क्यों न हम देवी भगवती से प्रार्थना करें। वही हमें इस संकट से मुक्ति दिला सकती हैं।' ऐसा विचार कर देवता देवी की आराधना करने लगे।

इस संकट के समय में भगवती की उपासना करने के लिए ब्राह्मण गण भी हिमालय पर्वत पर गए। समाधि, ध्यान और पूजा के द्वारा उन्होंने देवी की स्तुति आरंभ की।

देवताओं और ब्राह्मणों की प्रार्थना सुनकर, देवी ने उन्हें अपने दिव्य रूप के दर्शन दिए।

देवी की महिमा का गुणगान कर, ब्राह्मणों ने देवी को अपनी दुखभरी कथा सुनाई—''हे भगवती ! वेदों के लुप्त हो जाने से हमारी दैनिक क्रियाएं समाप्त हो गई हैं। अग्नि में हवन न होने के कारण वर्षा भी बंद हो गई है। वर्षा के अभाव से घोर सूखा पड़ गया है। नदी, नाले, कुएं और सागर, सब सूख गए हैं। भूख और प्यास से त्रस्त प्राणी त्राहि-त्राहि कर रहे हैं। कई तो अपने प्राणों से भी हाथ धो बैठे हैं। इस घोर संकट से हमें उबारें।''

प्राणियों को दुखी देखकर, भगवती की अनंत आंखों से आंसुओं के रूप में सहस्र जलधाराएं गिरने लगीं। उस जल से नदी-नाले भर गए। जल पाने से प्राणियों को बड़ी तृप्ति हुई।

देवता और ब्राह्मण मिलकर देवी से प्रार्थना करने लगे—''देवी ! आपने हमारा संकट दूर करने के लिए सहस्रों नेत्रों वाला अनुपम रूप धारण किया है। अतः हम आपको शताक्षी नाम से पुकारेंगे। हे शताक्षी ! अब आप दुर्गम नाम के दैत्य से हमें वेद वापस दिला दें।''—यह कहकर देवता और ब्राह्मण देवी के समक्ष नतमस्तक हो गए।

यह सब दुर्गम को सहन नहीं हुआ। उसने देवताओं को युद्ध के लिए ललकारा।

देवता और ब्राह्मण घबराकर देवी से प्रार्थना करने लगे—''हे शताक्षी ! हमारी रक्षा करो !''

उन्हें व्याकुल देखकर, देवी ने कहा—''वत्स ! तुम्हारी रक्षा के लिए ही मैं प्रकट हुई हूं। तुम निश्चिंत रहो ! उस दैत्य का नाश करके मैं तुम्हें वेद वापस दिलवा दूंगी।''

ऐसा कहकर देवी ने देवताओं और ब्राह्मणों के चारों ओर एक घेरा बना दिया और स्वयं युद्ध क्षेत्र में आ गईं।

दुर्गम की ललकार का उत्तर देते हुए देवी ने कहा—''दुर्गम, मैं तुम से युद्ध करने आई हूं। तुम्हें मुझे पराजित करना होगा।''

दुर्गम बोला—''नहीं, मैं देवताओं से युद्ध करूंगा। मैं एक स्त्री से युद्ध नहीं करना चाहता।''

''वे तो मेरे सुरक्षा चक्र में सुरक्षित हैं। तुम उन तक नहीं पहुंच सकते। अतः तुम्हें मुझसे ही युद्ध करना पड़ेगा।''—कहकर देवी ने उस दैत्य को उकसाया।

देवी और दैत्य की सेना में भीषण लड़ाई छिड़ गई। बाणों की वर्षा होने लगी। देवी ने अनेक शक्तियां प्रकट कीं। सबकी भुजाएं अस्त्र-शस्त्रों से सुशोभित थीं। उन शक्तियों ने दैत्यों की बहुत-सी सेना नष्ट कर दी। दस दिनों में दैत्यों की पूरी सेना नष्ट हो गई।

ग्यारहवें दिन दुर्गम ने स्वयं लड़ने की तैयारी की। उसने सम्पूर्ण शक्तियों पर विजय प्राप्त कर ली। इसके बाद वह देवी के रथ के सामने अपना रथ ले गया।

दुर्गम और देवी शताक्षी में भीषण युद्ध छिड़ गया। अंत में देवी ने दैत्य पर एक साथ पंद्रह बाण छोड़े। देवी के दो बाणों ने दुर्गम के दोनों नेत्रों को और दो बाणों ने दोनों भुजाओं को बींध दिया। एक बाण ने ध्वज को काट दिया और पांच बाण दुर्गम की छाती में घुस गए। चार बाणों से रथ के चारों घोड़े मर गए। एक बाण सारथि को लगा।

उस दैत्य के शरीर से तेज निकला और भगवती के रूप में जाकर समा गया। उस दैत्य के मर जाने पर चारों ओर शांति छा गई।

सभी देवता-ब्राह्मण मिलकर खुशी से झूम उठे। कहने लगे—''दुर्गम दैत्य का नाश करने वाली दुर्गा आपका जय-जयकार। आपको नमस्कार।''

देवी ने प्रसन्नता पूर्वक देवताओं को वेद सौंप दिए। ब्रह्माजी से बोलीं—''बिना सोचे-समझे वर देने से ही ऐसा अनर्थ हुआ। आप वेदों के अधिष्ठाता हैं। इनकी रक्षा करना आपका कर्तव्य है। अतः अब वर देने से पहले आप निश्चित कर लें कि कहीं इस वर के पीछे किसी का अनिष्ट तो नहीं होने जा रहा है।''

तब से ब्राह्मण वेदों की सेवा में लग गए और निरंतर भगवती महिमा का गुणगान करने लगे।

(देवी भागवत)

चीटू-नीटू

बरबादी कैसी भी हो, ठीक नहीं होती
हम पड़ोसियों के नाम लिखें, जो यह काम...

कांता चाची की बाल्टी भर चुकी है, फिर भी...
मोहन के खाली कमरे में रेडियो, बज रहा है, दोनों का नाम...

डब्बू हमेशा आधा खाता है आधा फेंक देता है लिखो इसका भी नाम...

मोहन का नाम लिखो, कापियों पर कीलम काटी करके इन्हें बरबाद...
तुम खरीद कर देते हो क्या
नाम लिखने के साथ-साथ हमें सब को समझाना भी चाहिए...
बरबादी समय की हो या चीजों की, ठीक नहीं

दादी, आप सारा दिन लेट कर समय बरबाद...
हाय राम, इन्हें क्या हो गया है, ओ बहू...

सारा दिन कापियों को बरबाद करने के अलावा तुम्हें कोई काम नहीं...

शीर्षक बताइए

राजा ने पहने, फूलों के गहने : इस चित्र के ऐसे ही अनेक शीर्षक हो सकते हैं। आप भी सोचिए, कोई सुंदर-सा छोटा शीर्षक। उसे पोस्टकार्ड पर लिखकर १५ मई' १९९४ तक **शीर्षक बताइए, नंदन मासिक, हिन्दुस्तान टाइम्स, १८-२० कस्तूरबा गांधी मार्ग, नई दिल्ली-११०००१** के पते पर भेज दीजिए। चुने हुए शीर्षकों पर नकद पुरस्कार दिए जाएंगे।

परिणाम : जुलाई '९४ अंक

चित्र : हरिहर स्वरूप विनोद

पुरस्कृत चित्र

कु. इंद्राणी चक्रवर्ती, द्वारा डी. डी. चक्रवर्ती, केन्द्रीय कार्यशाला, पो. चसनाला, जि. धनबाद-८२८१३५

इनके चित्र भी पसंद आए—अंशु शर्मा, धर्मशाला, (कांगड़ा); सुनीता मेथवानी, जलगांव; विदुषी भटनागर, भोपाल; नोनू, कलकत्ता; शुभांगी मांडले, बैतूल।

बाल-सभा

प्रियंका मनोट

मनीष
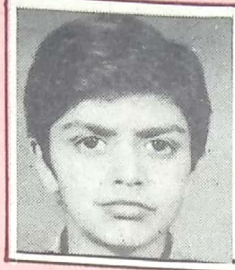
मनोजकुमार

मीतू

सूरज

शीतू

पत्र मिला

□ मार्च की 'नंदन' बहुत अच्छी लगी । इसमें 'चौथा पाठ', 'सबसे सुंदर', 'चमक उठी तलवार' और 'चीटू-नीटू' बहुत प्रिय लगे ।

—प्रदीपकुमार, गुड़गांव

□ नंदन एलबम में विश्वनाथन् आनंद का चित्र बहुत पसंद आया । 'चमक उठी तलवार' इस अंक की सर्वश्रेष्ठ रचना थी । 'सबसे सुंदर' और 'कौन गिरा' कहानियां मजेदार लगीं ।

—अविनाश नाटेकर, बूंदी (राज.)

□ वसंत की ऋतु में रंग-बिरंगे फूलों को 'नंदन' में सजा देखकर मन प्रसन्न हो गया । 'फिर आया फूलों का मौसम' बेहतरीन झांकी थी ।

—जसविंद्र सिंह, जालंधर

□ इस चार दिन की जिंदगी में यदि पत्रिका सम्राट 'नंदन' के मात्र चार अंक ही पढ़ने को मिल जाएं , तो भविष्य उज्जवल हो सकता है । मार्च अंक तो गागर में सागर लिए हुए था । नंदन एक अद्वितीय पत्रिका है ।

—अपूर्वप्रताप सिंह, जैतपुर (बि.)

□ मार्च '९४ अंक बहुत अच्छा लगा । 'चौथा पाठ', 'छड़ी से दवा' और 'जल से जल' कहानियां बहुत अच्छी लगीं । चित्र-कथा 'तीन पर दो' भी मजेदार थीं । एलबम में विश्वनाथन् आनंद और गीत सेठी के चित्र विशेष उल्लेखनीय लगे ।

—संजय जोशी, बम्बई

□ 'नंदन' एक पत्रिका ही नहीं फूलों का हार है । इसे मैं हर वक्त गले में पहने रहना चाहता हूं । इसके हर अंक का मुझे बेसब्री से इंतजार रहता है । मार्च अंक की कविताएं, कहानियों में 'राम को बांधा' और 'चमक उठी तलवार' का कोई जवाब नहीं । यह अंक मुझे और मेरे दोस्तों को विशेष पसंद आया ।

—श्रीराम मायल, श्रीगंगानगर

□ मैं बहुत वर्षों से 'नंदन' की पाठिका हूं । इसका 'आप कितने बुद्धिमान हैं' स्तम्भ मुझे बहुत पसंद आता है । मेरी छोटी बहन की भी यह प्रिय पत्रिका है । अक्सर पत्रिका को कौन पहले पढ़े, इस बात पर हमारा झगड़ा हो जाता है । मैं हर महीने इस पत्रिका के आने का इंतजार करती हूं ।

—बेबी सिंह, भोजपुर (बि.)

□ मुझे 'नंदन' बच्चों की एकमात्र रोचक और ज्ञानवर्धक पत्रिका लगती है । मार्च अंक की सभी रचनाएं एक से बढ़कर एक थीं । पत्रिका में 'ज्ञान-पहेली' मुझे सबसे अच्छी लगती है । मेरी ईश्वर से प्रार्थना है कि 'नंदन' खूब उन्नति करे ।

—अमृतेश, नया जक्कनपुर

□ इस अंक में प्रकाशित कथा 'बाघ के भाई' ने मुझे बहुत प्रभावित किया । यह कहानी मेरे मन को अंदर तक छू गई । मैंने आज तक ऐसी कोई कहानी नहीं पढ़ी है ।

—कपिल पांडे, देहरादून

इनके पत्र भी उल्लेखनीय रहे : चंद्रभूषण, मथुरा; डा. पवन कुमार, लहेरिया सराय; पूजा ओबेराय, भोपाल ।

जनता से सीधा सम्पर्क—
दिल्ली के मुख्यमंत्री श्री मदन लाल खुराना

दिल्ली में आई ऐसी सरकार
जो सबकी सुधि ले, सबका साथ दे !

वे कहते थे दिल्ली का माहौल इतना बिगड़ गया है कि अब कुछ सुधार नहीं हो सकता ! हमने कहा अगर मन पक्का हो तो मौसम भी बदल सकता है । और आते है दिल्ली की नई सरकार ने जो कुछ किया, उससे आम आदमी भी कह उठा— वाह ! बदल गया मौसम !

लेकिन अभी तो शुरूआत है । लक्ष्य है दूर, यात्रा है लम्बी ... जिसे पूरा करना है आप सबके साथ मिल जुलकर ! इस तरह... !

- भ्रष्टाचार रहित प्रशासन के लिए कृत संकल्प । गृह-कर एवं बिक्री-कर प्रणाली का उदारीकरण एवं गृह कर की दरों में भारी छूट ।
- सभी झुग्गी-झोंपडणी बस्तियों में मीटर सहित अधिकृत बिजली कनेक्शन की सुविधा ।
- विशेषकर अनुसूचित जाति, जनजाति एवं पिछड़े वर्ग की महिलाओं के लिए अनेक योजनाएं, जैसे इस वर्ग की विधवाओं की बेटियों के विवाह में पांच हजार रुपये की आर्थिक सहायता ।
- बिना चारित्र्य के ज्ञान अधूरा है । नई पीढ़ी में नैतिकता के संस्कार देने के लिए सभी विद्यालयों में नैतिक शिक्षा अनिवार्य ।
- देश के आर्थिक चक्र को परम्परागत रूप से गतिशील करने वाली एवं राष्ट्रीय संस्कृति में पूज्या मानी गयी गायों के लिए दस गो-सदन ।
- राष्ट्रीय गीत वन्दे मातरम् से विधान सभा की कार्यवाही और हर दिन समस्त विद्यालयों में पठन-पाठन का श्रीगणेश ।
- राष्ट्रीय संस्कृति की प्राणवाहिनी देवभाषा संस्कृत के विकास हेतु सरकार का संकल्प पूरा करने की दिशा में पहला कदम-संस्कृत अकादमी के अनुदान में अन्य अकादमियों के समकक्ष वृद्धि ।
- हरिद्वार की पवित्र हर-की-पौड़ी की तरह दिल्ली के ऐतिहासिक यमुनातट पर सुन्दर घाटों का निर्माण ।
- 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवताः' के आदर्श का अनुसरण करते हुए महिलाओं के विकास हेतु राज्य महिला आयोग की स्थापना एवं नौकरी पेशा महिलाओं के लिए छात्रावास ।
- अनुसूचित जाति/जनजाति के सभी मेधावी छात्रों (परीक्षा में 75 प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त करने वालों) को छात्रवृत्ति ।

Rashtriya

आपकी सरकार, आपके द्वार

सूचना एवं प्रचार निदेशालय, दिल्ली सरकार द्वारा जारी

अजब-अनोखी दुनिया

डा. शांतिस्वरूप भटनागर के सम्मान में डाक टिकट : आजादी के पहले की बात है। दूसरा महायुद्ध चल रहा था। मलेशिया और सिंगापुर में फौजों के लिए सामान जाना था। हवाई जहाज से पेट्रोल, डीजल और पानी की टंकियां फेंकी जातीं। ऊंचाई से गिरने के कारण वे फट जातीं। सारा तेल-पानी फैल जाता। मामला हमारे देश के एक वैज्ञानिक डा. शांतिस्वरूप भटनागर के सामने आया। लड़ाई के दिनों में प्लास्टिक का चलन शुरू ही हुआ था। मजबूत प्लास्टिक यानि पोलिमर को बनाना बहुत कम लोग जानते थे। डा. भटनागर ने इसी पोलिमर के पीपे (डिब्बे) हाथ से ढाले। उन्हें लेकर पहुंच गए राशन विभाग के बड़े अधिकारियों के पास। दिल्ली में एक ऊंचा भवन है—नार्थ ब्लाक। उसकी छत पर पीपा ले जाया गया। पानी भरकर उसे छत से नीचे फेंका गया। सबको लगा कि अब जमीन से टकराकर पोलिमर का पीपा फट जाएगा। मगर ऐसा नहीं हुआ।

आजकल डा. शांतिस्वरूप भटनागर की जन्म शताब्दी मनाई जा रही है। उनके जन्मदिन २१ फरवरी को डाक विभाग ने इस महान वैज्ञानिक की याद में एक डाक टिकट जारी किया।

ईफिल टावर जितनी मोटी किताब में छपेगा जीन का खाका : मां-बाप के गुण बच्चों में भी पहुंचते हैं। ये गुण पहुंचाने का काम करते हैं —जीन। जीन यानि पैतृक गुणों की इकाइयां। हमारे शरीर में अरबों कोशिकाएं होती हैं।

हर कोशिका में गुणसूत्रों (क्रोमोसोम) की छियालीस पट्टियां होती हैं। इन्हीं पट्टियों पर जमे रहते हैं जीन। इनकी जमावट का कोई खाका अभी तक नहीं बना था। अब फ्रांस के वैज्ञानिकों ने यह काम किया है। उन्होंने जीन की जमावट का पूरा खाका (नक्शा) खींच दिया है।

अगर कोई इस खाके को कागज पर छापना चाहे, तो कितनी मोटी किताब बनेगी ? अंदाज है कि करीब एक हजार फुट मोटी। पेरिस के प्रसिद्ध 'ईफिल टावर' की ऊंचाई भी इतनी ही है।

क्यों बिस्तर के नीचे रहता है भय का भूत : भले ही दुनिया में भूत-प्रेत न हों, उन्हें मानने वालों की कमी नहीं है। बच्चे तो सबसे ज्यादा उन पर विश्वास करते हैं। पूरी दुनिया का यही हाल है। कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के एक मनोविज्ञानी ने दिलचस्प खोज की है। उनका कहना है कि लड़कियों को बिस्तर के नीचे ही भूत दिखाई देते हैं। रिचर्ड कास नाम के मनोविज्ञानी ने बच्चों की कल्पनाओं का अध्ययन कर, यह नतीजा निकाला है।

लड़कियों को बिस्तर के नीचे भूत क्यों दिखाई देते हैं ? रिचर्ड का कहना है कि शुरू में आदमी जंगलों में रहता था। वहां जानवरों के बचाव का तरीका था, पेड़ों पर जा बैठना। वजन में हलकी-फुलकी होने के कारण लड़कियां आसानी से वहां जा बैठती होंगी। कभी-कभार जानवर उन पर नीचे से झपट्टा मारने की कोशिश भी करते होंगे। तभी से यह डर पीढ़ी दर पीढ़ी चला आ रहा है। भरोसा न हो तो किसी डरावनी फिल्म के दौरान भयानक दृश्य आने पर लड़कियों को देखो। वे तुरंत कुर्सी पर पैर ऊंचे कर लेंगी। लड़कों में यह आदत कम देखी गई है।

फोटोकापी की छपाई मिटाने की मशीन : जापान में एक कम्पनी है— रीको कारपोरेशन। वहां एक नई मशीन बनी है। यह फोटोकापी के कागज की स्याही सोख सकती है। मशीन में छपा हुआ कागज डालो, उधर साफ-सुथरा सफेद कागज बाहर। इस कागज को फोटोकापी में फिर से इस्तेमाल किया जा सकता है।

—बृजमोहन गुप्त

मेहनत का फल

चंदनपुर गांव में एक किसान अपनी पत्नी व बच्चों के साथ रहता था। उसके दो बच्चे थे— कुणाल और कविता। उनके माता-पिता गरीब थे। दिन-भर दूसरों के खेतों में काम करके कुछ पैसा कमा पाते थे।

कुणाल को चित्रकारी का बड़ा शौक था। उसके पास पुराने रंगों का डिब्बा और एक ब्रश था जो उसके पिता ने उसे लाकर दिया था।

चंदनपुर का राजा चित्रसेन भी कला-प्रेमी था। एक बार राजा ने घोषणा करवाई कि जो बच्चा सबसे अच्छा चित्र बनाकर दरबार में पेश करेगा, उसे मुंहमांगा इनाम दिया जाएगा।

कुणाल ने भी चित्र बनाने की ठानी। एक बार, जब कुणाल स्कूल से घर लौटा, तो उसने देखा कि आंगन में एक अद्‌भुत चिड़िया दाना चुग रही है। उसने वैसी चिड़िया कभी नहीं देखी थी। उसने सोचा —'राजा को इस चिड़िया का चित्र बनाकर दूंगा। वह अवश्य खुश हो जाएंगे।' उसने तुरंत चित्र बनाना शुरू कर दिया। जब कविता कुणाल को बुलाने ऊपर आई तो वह दंग रह गई।

थोड़ी देर बाद जब कुणाल के माता-पिता खेत से लौटे, तो उन्होंने कुणाल को चित्रकारी करते पाया। उन्होंने कुणाल का हौसला बढ़ाया। जल्दी ही कुणाल ने चित्र पूरा कर लिया। वे कुणाल की चित्रकारी देखकर आश्चर्यचकित रह गए थे।

जब कुणाल अपने चित्र को प्रदर्शनी में ले गया,तो राजा ने उसके चित्र की बड़ी प्रशंसा की। अंत में राजा ने यह निर्णय दिया कि कुणाल ने सब बच्चों से बाजी मार ली है। पुरस्कार में राजा ने कुणाल को एक अनमोल रंगों का डिब्बा दिया, तो कुणाल फूला नहीं समाया। उसे अपने अथक परिश्रम का फल मिल गया।

—पल्लवी रामपुरिया, कलकत्ता

इनकी कहानियां भी पसंद की गईं : प्रियंका सोनी उज्जैन; गौरी, मद्रास; नेहा लोहानी, बम्बई; दीपक गर्ग, भरतपुर।
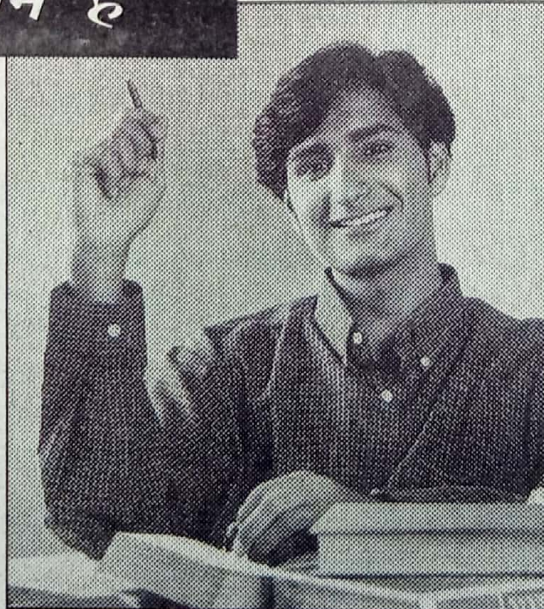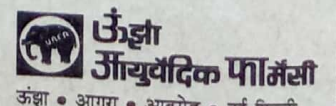
बात कराता टेलीफोन

बजी सुरीली घंटी
देखो तो, जा बंटी,
कौन कहां से बोल रहा—
किसे बुलाता टेलीफोन !

दिल्ली रोम-पनामा
लंदन-याकोहामा,
नम्बर मिला सुनो तो जी,
बात कराता टेलीफोन ।

हो जितनी भी दूरी
जरा नहीं मजबूरी,
जिसको चाहें, उसको ही,
ढूंढ़ बुलाता टेलीफोन ।

बैठा आगे जैसे
बोला करता वैसे,
अपना और परायों का
हाल बताता टेलीफोन ।

सुन लो पंडित पोंगा
बिना तार अब चोंगा,
चलता-फिरता कॉर्डलेस
लो, बतियाता टेलीफोन !

—रामवचन सिंह 'आनंद'

नई पुस्तकें

दृष्टि—लेखक : डा. एम. एस. अग्रवाल; प्रकाशक : डा. अग्रवाल आई इंस्टीट्यूट, १५, दरियागंज, नई दिल्ली-२; मूल्य : ५० रुपए ।

डा. अग्रवाल नंदन के परिचित लेखक हैं । पुस्तक 'दृष्टि' में नेत्रों के रोगों का निदान-योग, आयुर्वेद एवं प्राकृतिक साधनों द्वारा चित्रों की सहायता से समझाया गया है । पुस्तक हिंदी और अंग्रेजी में है । बच्चों के लिए विशेष उपयोगी है ।

नेत्र-रोग बढ़ते जा रहे हैं । छोटे-छोटे बच्चों के चेहरों पर चश्मा दिखाई देता है । कई नेत्र रोग हो जाते हैं जिसके कारण अस्पतालों के चक्कर काटने पड़ते हैं । लेखक ने चिकित्सा पद्धति को सरल भाषा में बताया है । पाठकों के लिए नेत्र पहेली भी है जिसमें अनेक पुरस्कार रखे हैं । छपाई सुंदर है ।

नन्ही कविताएं—कवयित्री : नूपुर शर्मा; प्रकाशक : आर्य बुक डिपो, करौलबाग, नई दिल्ली-५; मूल्य : १५ रुपए ।

नूपुर शर्मा बारह साल की है । आठ साल की थी तभी से कविताएं लिखने लगी । कई पत्र-पत्रिकाओं में उसकी कविताएं छपीं । इनाम भी मिले । 'नंदन' की प्रतियोगिता में 'घर' कविता को इनाम मिला । नूपुर की तीस कविताएं पुस्तक में हैं । तारे, बरखा रानी, ओस, पेड़, दादा जी, झूला, डाकिया, किताब—इनके बारे में बालिका ने जो सोचा-समझा, वही लिखा है । ऐसे ही आस-पास की दूसरी चीजों के बारे में भी । कविताओं में मिठास है, बाल-मन का सहज सोच भी ।

सपना बाल-गीत—कवि : प्रेमकिशोर पटाखा; प्रकाशक : तृषा पब्लिकेशन, पो. बाक्स-१६१, सहारनपुर; मूल्य : ११ रुपए ।

पुस्तक में चार-चार पंक्तियों के सोलह शिशु-गीत हैं । सभी गीत मजेदार हैं । मोटा टाइप और बहुरंगे चित्र हैं । नन्हे-मुन्ने इसे पसंद करेंगे ।

बौना आया—लेखिका : चित्रा गर्ग; प्रकाशक : पीताम्बर पब्लिशिंग कम्पनी, ईस्ट पार्क रोड, नई दिल्ली-५; मूल्य : १० रुपए ।

घरों में दादी-नानी जैसी कहानियां सुनाती थीं, कुछ वैसी ही आठ कथाएं पुस्तक में हैं, सभी दिलचस्प हैं । अंत में कोई न कोई सीख देती हैं । उड़ने वाला पलंग, बौना आया और अनोखा वृक्ष-ये परीकथाएं विशेष रूप से अच्छी हैं । हर कहानी के साथ चित्र हैं और छपाई अच्छी है ।

वनशाला—लेखक : विराज; प्रकाशक : आत्माराम एंड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली-६; मूल्य : ५० रुपए ।

कवि कालिदास का नाटक 'शकुंतला' किसने नहीं पढ़ा ? ऋषि कण्व के आश्रम में राजा दुष्यंत की भेंट शकुंतला से हुई थी । कोटद्वार से कुछ दूर है कण्व आश्रम । दिल्ली के स्कूली छात्र उस आश्रम में पहुंचे । रामजस स्कूल के चुने हुए लड़के-लड़कियों को वनशाला शिविर में भाग लेना था । छात्रों को वन्य जीवन तथा वनस्पति की जानकारी देने, यात्रा करने और प्रकृति के बीच रहने का यह अनोखा प्रयोग था । उसी के बारे में लेखक ने लिखा है । भाषा सरल और शैली रोचक है ।

पत्र - मित्र

सम्पादक, 'नंदन', नई दिल्ली-१

नाम ______________________ आयु ______

पूरा पता ______________________

____

रुचि ______________________

पुस्तक पढ़ने और लेखन में रुचि :

१. अवनीश कथूरिया, १५ वर्ष, बी-४७ जंगपुरा-बी, नई दिल्ली; २. शिवांगी भारती, १३, सुधीर चौधरी, पूसा बाजार, समस्तीपुर; ३. शैलेंद्र कुमार गुप्ता, सी-१/४६ गुलमोहर विहार, जूही, कानपुर; ४. सुरेंद्रकुमार वर्मा, १५, राजेंद्र आश्रम, कुशवाहा कालोनी, गया; ५. दीनदयाल उपाध्याय, १५, डी ५/६७ त्रिपुरा भैरव गली, दशाश्वमेध, वाराणसी; ६. राजनकुमार, १४, महावीर नगर, वार्ड नम्बर ६, डुमरा कोर्ट, सीतामढ़ी; ७. रामविजय, १३, जी-२/२२३ अरमापुर इस्टेट, कानपुर; ८. विजयकुमार कुशवाहा, १३, लखपति प्रसाद, १०७ आजाद नगर, आलमबाग, लखनऊ; ९. रविकर शर्मा, ९, डाबर की दुकान, बाटा चौक, मधुबनी; १०. कल्पेश जोशी, १२, गीता जोशी, एच. एम. टी. भवाली, नैनीताल; ११. मो. शहनवाज खां, १४, रसूलदाद खां, दिलावरपुर, मुंगेर; १२. विनीतकुमार जिंदल, १०, प्रह्लादकुमार जिंदल, मेन रोड, कुनकरी, जि. रायगढ़; १३. कृष्णचंद्र, १६, १९०/बी-४ रेलवे कालोनी, पहाड़गंज, बसंत लेन, नई दिल्ली; १४. अभिषेक कुमार, ९ केदारनाथ, सिंहगढ़, नई कालोनी, लाल डिग्गी, मिर्जापुर; १५. मुमताज अली, १६, ए. के. अंसारी, माधोसिंह बाजार, वाराणसी; १६. सचिन गुप्ता, १३, सुभाषचंद्र गुप्ता, पेट्रोल पम्प वाले, मु. घासी, पो. गंजडुंडवारा, एटा; १७. नीतू जैन, १६, ३८१ गुमास्ता नगर, इंदौर; १८. मोहम्मद रईस, १३, अब्दुल रहमान, बुचनी गंज, फैजाबाद; १९. सौरभ अग्रवाल, १०, अरुणकुमार, ओम हाउस, दौलतगंज, छपरा; २०. सुरेशकुमार गुप्ता, १६, सीताराम साह, ग्रा. डुमरी, पो. खबड़ा, मुजफ्फरपुर; २१. कीर्ति मिश्रा, १६, सैक्टर १९ म. न. ए/४७, राउरकेला, सुंदरगढ़; २२. पूजा पाठक, १३, जगदीश शर्मा, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, टूंडला, फिरोजाबाद; २३. अविनाश कुमार, १४, केदारनाथ, सिंहगढ़, नई कालोनी, लाल डिग्गी, मिर्जापुर; २४. रामविलास मीणा, १५, रामप्रसाद, ग्रा. आरेज, पो. निसूरा (राज.); २५. शंकरकुमार कांस्यकार, १६, संजय रेडी मेड स्टोर, जपला, पलामू; २६. सुमितकुमार अग्रवाल, ११, गोयल मेडिकल हाल, हास्पिटल रोड, रीवा; २७. नंदिनी कुमारी, १३, अरुणकुमार (निरीक्षक) मु. राजो पट्टी, सीतामढ़ी; २८. स्तुति शुक्ला, ११, ९/ए तिलक ब्रिज रेलवे कालोनी, नई दिल्ली।

खेल, संगीत और चित्रकला में रुचि :

१. रीना कुमारी, १३ वर्ष, शिवपूजन प्रसाद, ए. जी. कालोनी, शेखपुरा, पटना; २. वरुण निगम, ९, ४३६ गली शीशमहल, बाजार सीताराम, दिल्ली; ३. मोनिका खटाना, १२, प्रेमसिंह खटाना, ३/९ यमुना कालोनी, डाक पत्थर, देहरादून; ४. ज्योति श्रीवास्तव, १३ सी १३/३९ औरंगाबाद, वाराणसी; ५. शिखरकुमार अग्रवाल, १६, १८ कैलाश कालोनी, निकट-सिविल कोर्ट, रामपुर; ६. अरुणकुमार, १४, सीताराम साह, कादिराबाद चौक, पो. लालनाग, जि. दरभंगा; ७. मनीष गुप्ता, १६, १६६ शिव कुटीर, गुरुदयाल सिंह रोड, सिविल लाइन, लुधियाना; ८. पूर्णेंद्र वर्मा, १३, ८/४१२ सैक्टर-३, राजेंद्रनगर, साहिबाबाद, गाजियाबाद; ९. विश्वंजय त्रिपाठी, ११, डा. जी. पी. त्रिपाठी, झुमरी तलैया, हजारीबाग; १०. अवनीश तिवारी, १२, विजयकुमार तिवारी, यू. ए. जी. ई. बोरजार, गोहाटी; ११. रजनीशकुमार, १४, पृथिवीनाथ प्रसाद, तुर्की निवास, परती टोला, छाता बाजार, मुजफ्फरपुर (बि.); १२. राजेश कुमार, १४, म. नं. १३४७ ए, सैक्टर २९, फरीदाबाद; १३. अजयकुमार गुप्ता, १६, १२८/३/३१३३ वाई-१ ब्लाक, यशोदा नगर, कानपुर; १४. अरुणदीप त्रिपाठी, १६, २४ डी-२ यशोदा नगर, कानपुर; १५. नवीन १५, रावत पाड़ा, आगरा., १६. माधवी शर्मा गुलेरी, १५, म. नं. ८४, गली नं. ३, साउथ एक्सटेंशन-१, नई दिल्ली; १७. योगेशकुमार भास्कर, १६, श्यामलाल श्याम, पो. उसावां, बदायूं; १८. अशोक चौहान, १४, १४ हनुमान चौक, सेगांव, खरगोन; १९. सुनीलकुमार चौधरी, ८, १३/९ पी. एन. टी. कालोनी, बोकारो स्टील सिटी; २०. ऋचा, ११, शांति निवास, वनस्थली, जि. टोंक; २१. इमरान अहमद सिद्दिकी, १४, १३/१८ शिड्यूल बी, राष्ट्रपति भवन, नई दिल्ली; २२. राकेशप्रसाद वर्मा, १३, तुलसीराम वर्मा, चंदन एजेंसी, चांदनी चौक, अररिया।

डाक टिकट संग्रह, पहेली और भ्रमण में रुचि :

१. अंकुर ऐरन, १६ वर्ष, गायत्री भवन, बरेली सराय, सम्भल; २. हेमंत सुराणा, १४, गुलमार्ग प्रोडक्टस्, नंदी साही, कटक; ३. जोगिंदरसिंह, १३, पालासिंह, ग्रा.- नयाराखड़ा, पटियाला; ४. इंद्रप्रीत सिंह, १४, सुखमनी बिल्डिंग, डेरा संतपुरा, यमुना नगर, (हरि.); ५. कविता निगम, १५, ४७० सती तालाब, उन्नाव; ६. विनीत केड़िया, १६, ७/बी न्यू पार्क कोन्नगर, हुगली (प. बं.); ७. लक्की दुआ, १५, ४३ प्रेम वाटिका, मिशन कम्पाउंड, सहारनपुर; ८. गौरव अग्रवाल, १६, संतकुमार अग्रवाल, रमेश नगर, नजीबाबाद।

शीर्षक बताइए

परिणाम

ढेर सारे शीर्षक मिले। 'नंदन' मार्च '९४ अंक में छपे चित्र पर। पुरस्कार के लिए ये शीर्षक चुने गए।

बैठी जोहूं बाट यहां, मैया मेरी गई कहां !
—सुनीता, श्याम सदन, पो. सालासर, जि. चूरू (राजस्थान)

आन निराली बान निराली, गुड़िया की है शान निराली।
—संदीप गुप्ता, २०८७ ए/डब्ल्यू-जेड, रानीबाग, शकूर बस्ती, नई दिल्ली।

अकेली हूं उदास, कोई खेले मेरे पास।
—पवन राय चंदानी, ए न्यू ३६, म. नं. ३७५ हाईस्कूल के सामने, बैरागढ़, भोपाल (म. प्र.)।

पास नहीं है गुड़िया रानी, किसे सुनाऊं एक कहानी।
—अशोक पांडेय, रामआधार सिंह की बाड़ी नं. ७, गली नं. १४, जगदल, जि. २४ परगना (प. बं.)।

इनके शीर्षक भी पसंद आए : मेघा, पटना; पीयूष वर्मा, इटावा; उत्तमकुमार पाठक, गोंडा (उ. प्र.); भारती डडवाल, गुड़गांव (हरि.); सुनीलकुमार गुप्त, देवरिया; राकेश कुमार अग्रवाल, राउरकेला; नागेंद्रनाथ पांडेय, वर्धमान (प. बं.)।

आप कितने बुद्धिमान हैं : उत्तर

१. सीढ़ियों पर लगे लैम्प का आकार बदल गया है।
२. पास खड़े व्यक्ति के ओवर कोट के पीछे केवल एक बटन है।
३. दूसरी ओर टिकी ब्रश वाली झाड़ू का डंडा सफेद है।
४. जूते साफ करने वाले की बाल्टी में पड़ा कपड़ा जमीन से ऊपर है।
५. उसके एप्रेन के फीते छोटे हैं।
६. जूते साफ कराने वाले व्यक्ति की फाइल मोटी है।
७. कोने में खड़ी महिला के छाते का हैंडिल दूसरी ओर घूमा है।
८. उसके बाल घने हैं।
९. उसके सामने लगे पौधे की पत्तियां छोटी हैं।
१०. दरवाजे से आने वाले व्यक्ति के सिर पर टोप है।
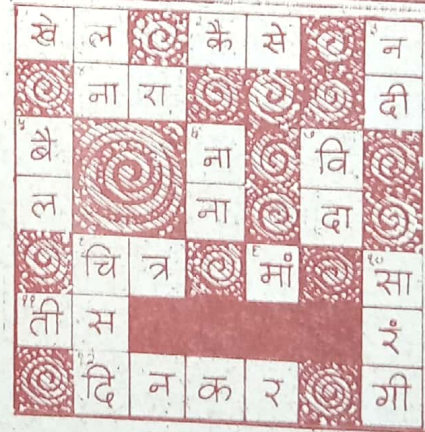
नंदन ज्ञान-पहेली : ३०३

परिणाम

इस बार पाठकों ने पहेली हल करने में खूब दिमाग लगाया। चार सर्वशुद्ध हल आ गए। पुरस्कार की राशि इस प्रकार बांटी जा रही है —

सर्वशुद्ध : चार : प्रत्येक को दो सौ पचास रुपए

१. पुनीत जैन, धनबाद ; २. विकास गर्ग, जयपुर ; ३. राजेश कुमार बिंजराजका, सिवान ; ४. प्रीति सिंहल, गाजियाबाद।

दी हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड की ओर से राजेंद्र प्रसाद द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, १८-२०, कस्तूरबा गांधी मार्ग, नई दिल्ली-११०००१ से मुद्रित तथा प्रकाशित।
कार्यकारी अध्यक्ष : नरेश मोहन

Scanned with CamScanner

जवाब :
१. फूलों की पंखुड़ियां ज्यादा हैं.
२. तोते की चोंच खुली है.
३. तोते की गर्दन पर लाल पट्टी है.
४. लड़की की आखें खुली हैं.
५. लड़की मुस्कुरा रही है.
६. फ्रॉक पर सितारे बने हैं.
७. लड़की के कंगन पर हीरे जड़े हैं.
८. कुत्ते की जीभ बाहर है.
९. प्लेट पर पारले का नाम लिखा है.
१०. प्लेट में मैंगोबाइट रखी हैं.

रजि. नं. डी.एल.-२७००५/९४ आर.एन.आई. नं. १०५२५/